पलकों में बन्द पल

डॉ. शिवकुमार शर्मा
एम ए , एम एड पीएच डी (शिक्षा)
पूर्व सचिव, माध्यमिक शिक्षा बोर्ड
एव
अपर निदेशक शिक्षा राजस्थान



राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर
के आर्थिक सहयोग से प्रकाशित

पुस्तक सदन
231 बापू बाजार उदयपुर-313001
द्वारा प्रकाशित ✆ 525389

मूल्य 85 रुपये
आवरण डॉ धर्मवीर वशिष्ठ
कम्प्युटर ग्राफिक्स हरीश शर्मा विजय माहेश्वरी
प्रथम संस्करण 2000
पुनीत ऑफसेट उदयपुर द्वारा मुद्रित
✆ 412580

PALKON MAIN BAND PAI

By Dr Shiv Kumar Sharma
Published By Pustak Sadan 231 Bapu Bazar UDAIPUR (Raj)
Rs 85

पूर्वकथन

समय एक अनन्त प्रवाह है और मनुष्य की नियति यह कि कभी उसे उत्साह तो कभी अन्यमनस्कता से इस प्रवाह के साथ होना पडता है। मगर सदैव ऐसा नही होता। मनुष्य की जिन्दगी मे कुछ क्षण ऐसे भी आते हैं जब वह इस काल–प्रवाह को साक्षी भाव से देखता है। एक तीसरे व्यक्ति की तरह से अपने को अलग करके देखना आसान नही है। जो हो रहा है–वह वर्तमान हे जो हो चुका–वह भूत है और जो होने वाला है–वह भविष्यत काल है। इन तीनो की साक्षी कौन देगा एक साथ ?

जा अतीत हो चुका बीत गया व्यतीत हो गया वह स्मृति रूप म सुरक्षित रहता है हमारे पास। कभी–कभी ज्यो का त्यो कभी–कभी खण्ड रूप मे अस्पष्ट ओर धुधला–धुधला। सच कहा जाए तो वर्तमान की भी यही स्थिति है। वर्तमान पल–पल निवर्तमान हो रहा है फिर उसे हस्तामलकवत देखन और अहसासन का दम्भ कितना व्यथ है ? और भविष्य वह तो हमारी कल्पनाओ ऐषणाओ और आतरिक ऊर्जा से प्रसूत ऐसा निराकार आकार है कि कभी हम उसके बारे मे सोचकर प्रफुल्लित हो उठते हे कभी उद्विग्न। सर्जक के लिये तीनो स्थितिया जो वस्तुत एक ही स्थिति की तीन प्रतिच्छायाए हैं सचमुच वरदान है। सृजन भी समय की तरह ही अनत प्रवाह ह।

इस अनत प्रवाह मे से कौन कितना चुनता है कितना बुनता हे क्या बुनता ह–यह सर्जक की व्यक्तिगत रुचि ओर क्षमता पर निर्भर है। सृजन क इस समुद्र से किस मोती मिलता है किसे सीप और किसे कवल रेत – ककड ? यह सयोग है सामर्थ्य हे या प्रारब्ध नही कह सकता। लेकिन एक सृजनधर्मी हाने के नात प्रतिपल सागर–सतरण को प्रस्तुत रहना चाहता हूँ। कई बार कर्म के आनद का स्वाद विलक्षण होता है। इस स्वाद को चखते रहन का मन होता हे।

गद्य–लेखन मे मेरी रुचि आरभ से ही रही है। गद्य मे भी डायरी और सस्मरण विधा मरी प्रिय विधाए रही हैं। मेरा ऐसा मानना है कि डायरी और सस्मरण लेखक के अतस् मे एक कथाकार भी अपनी सुषुप्तावस्था मे

विद्यमान रहता है। यदि ऐसा न हो तो ये सस्मरण और डायरी के पन्ने लेखक की व्यक्तिगत जिन्दगी का हिस्सा मात्र बनकर रह जाए। यही सुपुप्त कथाकार घटनाओ को एक सूत्र मे पिरोता है और परिवेशगत सच्चाइयो के साथ प्रस्तुत करने का हुनर सस्मरण लेखक को देता है। कदाचित् इसीलिये कुछ व्यक्तिगत घटनाए कुछ निजी पात्र कुछ नितान्त एकात सवेदनाए सार्वजनीन होकर साहित्य की परिधि मे 'सस्मरण' विधा के अन्तर्गत प्रतिष्ठित हो पाती है।

मेर इन सस्मरणा को वह हुनर हासिल हुआ है या नही यह मै नही जानता। इसका निर्णय सुधी पाठकवृन्द और समादरणीय समालोचक महानुभावो पर छोडता हूँ। मैंने जो जसा प्रथमत भोगा भोग हुए को स्मृतियो मे पुन पुन जीया और इस जीये हुए मे से जिसने मुझे स्पदित सवदित आह्लादित आलोडित किया उसे मैंने शब्द दे दिए। शब्द भी मेरे नही परपरा स प्राप्त अनुभव भी मेरे कहाँ महज समय की पदचाप परिवश का प्रक्षेपण इनमे कुछ भी मेरा नही है न शब्द न भाव न भव न अनुभव। मेरी यदि कोई भूमिका है तो केवल सयोजक की विनम भूमिका ह।

यदि म अपनी इस भूमिका क साथ न्याय कर सका होऊगा तो मुझ सताष आर प्रसन्नता की प्रतीति होगी।

52 गायत्री मार्ग
उदयपुर – 313001

– डॉ शिवकुमार शर्मा

अनुक्रमणिका

अतिम दिन

मुझे अपनी सेवा का अतिम दिन याद है । उस अतिम दिन मैं अपने कार्यालय गया । अपनी कुर्सी पर बैठा । मैंने अपने सहायको से कहा ऐसी फाईले जिनको प्राथमिकता से निपटाना है मेरी टेबिल पर प्राथमिकता के आधार पर भेजी जाये । ऐसा होता गया । करीब बारह बजे होगे । मेरे कक्ष मे एक जटाधारी अध्यापक आये । एक बद लिफाफा मेरे हाथ मे दिया । मैंने लिफाफा खोला । मेरे ही पदधारक पूर्व अधिकारी जी का पत्र था । लिखा था – ये मेरे निकटतक व्यक्ति है । इनकी सेवाओ का प्रकरण है । मैं अपने समय मे सरकार को अग्रेषित न कर सका । मुझे हार्दिक कष्ट है । आज आपका भी अतिम कार्य–दिवस है । मैं आपकी कार्यकुशलता का लोहा मानता हूँ । इनके प्रकरण को सुलझाते हुए आज ही सरकार को भेजेगे तो अनुगृहीत होऊगा ।

मेरे मन मे सकल्प उठा । इस पत्र को भी आज ही आना था ! अब आ ही गया है तो कुछ न कुछ तो करना ही होगा । ये न कर सके इसका हार्दिक कष्ट वे भोग रहे हैं । मैं भी न करके क्या वैसा ही कष्ट भोगू ? इससे अच्छा यह है कि मैं प्रकरण की स्थिति तो देखू । भावी कष्ट से अगर बच सकूँ तो अच्छी बात है । इस पत्र मे इन्होने लोहा मानने की बात भी तो लिख डाली । यह सच हो या झूठ पर जाचू तो सही कि मैं लोहा मनाने लायक हूँ भी या नही ।

मैंने घटी बजाई । मेरे निजी सहायक को बुलाया । वे आये । मैंने कहा तुम ऐसा कर सकते हो ? ये मेरे अग्रज कहते हैं – इस काम को न कर सकने का इनको हार्दिक कष्ट है । आज सध्या अगर ये मेरे घर आ जाये तो मैं इनसे धन्यवाद प्राप्त करने लायक रहूँ ऐसा कुछ करना है ।

यह कहकर वह पत्र मैंने उनकी ओर बढा दिया । साथ ही कहा – यह फाइल तत्काल प्रेषित कीजिये । यह भी याद रखिये यह प्रकरण आज सरकार को प्रेषित होना है । उन्होने पत्र पढा । एक पलक मेरी ओर झाके । मैंने उनका कधा थपथपाया । हो जायगा । फाइल मगवाओ तुम तो । वे चले गये ।

मैंने अध्यापकजी से पूछा पडितजी ! ये जटा क्यो बढा रखी है ? उत्तर मिला यह प्रकरण जिसके लिए पत्र लाया हूँ उसका निपटारा नही होगा तब तक की मनौती बोल रखी है श्रीमान् ! मैंने कहा अरे भाई ! दो चार दिन

पहले आते तो ठीक था । आज तो मै स्वय जल्दी मे हूँ। उत्तर मिला आज उधर चला गया था । मैंने उनको अपना दुखड़ा दुहराया । वे बोले – अभी आफिस जाओ । पत्र लिख देता हूँ । यह आदमी चाहे तो तुम्हारा काम आज का आज आगे बढ सकता है ।

मैंने कहा अच्छा तो यह बात है ।

इतनी देर मे फाइल मेरी टेबिल पर आ गई । मैंने उसका अध्ययन किया। प्रकरण की स्थिति देखी । सबधित व्यक्तियो को बुलाया । पत्र उनके सामने रख दिया । मैंने कहा उनका हार्दिक कष्ट दूर करने और इनका अनुग्रह प्राप्त करने मे हमको सहयोग कीजिये । देखिये न इन्होने मनौती बोली हुई है ।

मरी इस शैली ने उन सबमे सकारात्मक दृष्टि जाग्रत की । वे तत्पर हुए। शेष कार्यवाही हर हालत मे चार बजे तक पूरी करने का उन्होने वादा किया । शेष कार्यवाही के पश्चात् मेरे हस्ताक्षरा स राज्य सरकार का पत्र जाना था । उन सबकी उपस्थिति मे ही उस पत्र का डिक्टेशन मैंने मेरे निजी–सहायक को दिया। फिर मैंने उनसे पूछा ठीक है ? उन्होने कहा जी हॉ साहब । मैंने कहा बस तो अब आप लोगो का जिम्मा रहा । अब मैने मास्टरजी से कहा आप यहॉ कब तक बैठे रहेगे ! जाइये । चार बजे आपका काम पूरा होगा । चार बजे आइये । यह कार्य आपको सम्पन्न हुआ मिलेगा । आपको अब तो विश्वास हो गया न । वे चले गये । चार बजे तक सारी कार्यवाही पूरी हुई । कागजात उन्हे आगे लेजाने को प्राप्त हुए । जटाधारी मास्टरजी हृदय से कतज्ञ थे ।

इसी बीच मैंने मेरे निजी सहायक स कहा था मेरे चार्ज हेडिंग ओवर के कागजात तैयार कर लीजिये । मेरे नाम पर यहॉ प्राप्त सभी अर्धसरकारी पत्रो को और भी देख लीजिये । ऐसा न हो कि उनमे कुछ ऐसे हो जिनकी मुझे ही कार्यवाही करनी हा और आज वह रह जाये।

मैं काम मे लगा रहा । मेरे सहकर्मी अधिकारी सहायक और कर्मचारी मेरे कक्ष मे आते। अपने–अपने तरीके से अपनी अपनी भावनाए व्यक्त करते चले जाते। इस प्रकार निर्देश देते पूछ–ताछ करते काम करते और मिलते–जुलते घडी का काटा 5 00 बजे के निकट आ पहुचा । जिन अधिकारी को कार्यभार सौंपने के आदेश थे उनको मैंने बुला भेजा । इस बीच मैंने कार्यालय–सहायक से कहा था देखो भाई ! कोई ऐसी जरूरी फाइल या पत्र अब बाकी तो नहीं है जिस पर मेरे हस्ताक्षर होने जरूरी हो। एक बार और देख लीजिये। बाद मे मैं हस्ताक्षर नहीं करूगा। बस कार्यमुक्त हुआ कि हुआ । उन्होने सतोषजनक उत्तर दिया ।

कार्यभार सभलाने सम्बन्धी पत्रो पर मैने ठीक 5 00 बजे (साध्या) हस्ताक्षर किये। कार्यभार सभालने वाले अधिकारी ने यथास्थान अपने हस्ताक्षर किये । अब मै कार्यमुक्त था । सेवा निवृत्त था । स्वतत्र था । यह नवम्बर 30 1978 की बात है । तब मैं पचपन वर्ष का था । तब सरकारी नियम ही यह था । अच्छा नियम था । आदमी काम का रहता था । स्वाधीनता का मजा ले सकता था ।

उसी रात मै रेल से रवाना हुआ । रेल वहा से आठ बजे छूटती थी । इष्टमित्र स्टेशन पर विदाई देने आये । उनसे अभिवादन और मालाए स्वीकारते--स्वीकारते समय हो गया। गाडी रवाना हो गई । मेरे केबिन मे अकेला मैं । अकेला होना बहुत अच्छा । खास कर तब जब कोई काम करना हो । आफिस का काम । वह भी 'रुटीन' का काम । पर आज कोई काम नही । अकेलापन मुझे अखर रहा था । बतियाने को भी कोई नहीं। मुझे बहुत बुरा लगा।

मैंने अपना बिस्तर फैलाया । सामान व्यवस्थित किया । केबिन की चिटकनी बद की । बिस्तर पर लेट गया । नीद आती नही थी । आज की यात्रा विशेष यात्रा थी । विशेष सरकारी यात्रा । प्रथम बार कार्यभार सभालने को व्यक्ति अपने खर्चे से पहुचता है । परन्तु विदाई पर सरकार अपनें खर्चे से भेजती है। इस प्रकार यह यात्रा भी अतिम यात्रा थी । सेवानिवृत्ति से जुडे अनेक सकल्प–विकल्पो मे खोया मैं यात्रा कर रहा था । अनेक अच्छी–बुरी सभावनाए साथ लिए आती है सेवानिवृत्ति । सभावनाए ही नही एक तूफान भी। विचारो का एक तूफान।

मैं विचार करने लगा – बालक के जन्म से ही उसकी अच्छी सभाल की बात माताओ को बडे समझाते हैं । उसके 3–4 वर्ष का होते ही कहा जाने लगता है मुन्ना स्कूल जाएगा । उसकी स्कूल की प्रगति पर पूछ–ताछ की जाती है । वह ऊँची कक्षाओ मे पहुँचता है । मा–बाप कहते हैं तुम्हारी कालेजी पढाई का आधार यहा की मेहनत है । डिवीजन नही आया तो वहा प्रवेश नही होगा। कालेजी शिक्षा मे बार–बार याद दिलाया जाता है नौकरी यहाँ की उच्च सफलता पर निर्भर है । पूरी मेहनत करना । तुम्हारा भाग्य तुम्हारे हाथ मे है। जीवन के प्रत्येक पडाव पर अगले पडाव के लिए व्यक्ति को सचेत – सावधान किया जाता है । परन्तु सबसे बडा अजूबा यही कि जीविकोपार्जन या नौकरी करते हुए को कोई यह नही कहता – भावी जीवन के तुम्ही निर्माता हो । इस जीवन की ऐसी रचना करना कि भावी जीवन को सतोष सुख और आनद से भोग सको । यह भावी जीवन सेवा निवृत्त जीवन ही तो है । इस जीवन को महत्त्व नही देने का क्या कारण है ? क्या इस कारण कि इसकी अवधि बहुत कम होती है ? मुझे लगा – यह सही बात है । आज के 60 वर्ष पहले भारत मे सामान्य आयु 27 वर्ष थी । तब 40 वर्ष जी लेना बडी बात थी । आज भी पिछडे

क्षेत्रो मे यही स्थिति है । मुझे एक डराने वाला विचार आया । बचपन मे मैंने बुजुर्गों को कहते सुना था   पेशन होने पर कब्र म पैर लटक जाते हैं।   वह राजशाही युग था । मेवाड के महाराणा फतहसिहजी के सस्मरणो में से एक उदधरण याद आया । उन्हाने एक नय दीवान का नियुक्ति दी। दीवान को अपनी कारगुजारी दिखानी थी । राज्य के प्रशासन को चुस्त करना था । इस उद्देश्य से दीवान ने कई बुजुर्ग अधिकारियो को पेशन देने की योजना बनाई । योजना महाराणा साहब को प्रेषित की गई । महाराणा साहब और दीवान मे चर्चा हुई । दीवान की मान्यता थी कि बुजुर्गों की बजाय युवा अधिकारिया की नियुक्ति से प्रशासन चुस्त होगा । महाराणा साहब का अनुभव था कि सहिष्णुता   विश्वसनीयता परिपक्वता   दूरदशिता   सब्र और तहजीब जैसे गुण परिपक्व आयुवर्ग के लोगो मे अधिक होते है । इसलिए प्रशासन के लिए ऐसे लोग जरूरी हैं । तभी महाराणा साहब ने दीवान से उनकी उम्र पूछी । महाराणा साहब ने दीवान से यह भी पूछा   हमारी उम्र आप कितनी मानते हैं ।   अब महाराणा साहब ने दीवान साहब को उन सबकी उम्र भी   फाइल   पर से पढने को कहा जिनकी पेशन का प्रस्ताव था । स्थिति यो स्पष्ट हुई कि महाराणा साहब   दीवान ओर वे जिनको निवृत्त करने का प्रस्ताव था   सभी की आयु न्यूनाधिक रूप मे बराबर थी । अब तो दीवान साहब रवाना होने का सतूना बाधने लगे । महाराणा साहब ने उनको रोका। आदेश दिया कि इन सभी परिपक्व अनुभवी अधिकारियो को बनाये रखा जाये । इनको एक–एक युवा सहायक दिया जावे । अनुभवियो की सलाह से युवक कार्य करे । परिपक्वता और चुस्ती का तालमेल बिठाया गया । बुजुर्ग अधिकारिया के पाव कब्र मे लटकने से बचा लिय गय ।

उस युग म राजामहाराजाओ की सूझबूझ के लाग कायल थे। आज भी मेरे जैसे लोग तो कायल है । खास कर वे जिन्होने उनको राज करते देखा है । उनके राज मे नौकरी भी की है । कल्पना ससार मे खोया मैं तब की अब से तुलना करने लगा । वे धीमे चलते थे। जल्दबाजी नही करते थे। दूरदर्शी थे। चमत्कारो से उनका वास्ता नही था । अब तो चमत्कार दिखाने मे विश्वास है। अब तो जगलो को काटकर उनको बचाने जाया जाता है । जगली जानवरो को मारकर उनको बचाने का नारा लगाया जाता है । जलाशयो को सुखा कर बून्द–बून्द बचाने क चर्चे चलते है । आजादी को उच्छ्खलता मे बदलने देकर लोगो को समझाने के कार्यक्रम चलते हैं । आचार सहिता की बाते होती हैं । हडताल का अधिकार देकर उसके हद से गुजरने पर वापस लोटने के उपाय सोचे जाते हैं । मे ऐसे ही इधर–उधर के विषयो पर सोचता रहा।

मेरे चितन का चक्र चलता चला जा रहा था । गाडी पटरी पर दौड रही थी । मुझे एक और विचार आया । सेवानिवृत्ति के पहले मैने सेवानिवृत्ति पर एक अध्ययन पढा था। पढे लिखे होने का यही तो कष्ट है । कब कौनसी बात चुभ जावे । लग जावे । मुझे लगा कि मैं न पढता तो अच्छा था।

इस अध्ययन को मैने पढा क्यो ? पढा नही पढवाया गया । मेरे एक मित्र प्रकाशक ने उस रचना को भेजा था । लिखा था — यह आपके काम की है । सेवानिवृत्ति पर मार्गदर्शन देगी । परन्तु मेरी बडी खराब आदत । नया साहित्य मिला तो पढने पर जुट पडा । पढ डाला । उसकी चुभन वाली बात थी — सेवानिवृत्ति के प्रथम तीन वर्ष सकटपूर्ण (क्रूसिएल) होते हैं। इस अवधि मे व्यक्ति स्वय का नई परिस्थितिया से तालमल बिठाता है । मैं चितन करन लगा — क्या कब्र मे पाव तीन साल तक लटके रहेगे ? मैने देखा कि मैं एक अध कूप के किनारे पर हूँ । मेरे पाव बहुत भारी-भारी है। कूप मे लटके हैं । हाथ पीछे जमीन पर है । इनके जोर पर मैं जमीन की ओर खिसकने की कोशिश कर रहा हूँ । जोर लगा रहा हूँ । जोर लगता ही नही। बार-बार कोशिश कर रहा हूँ । पल-पल यह लग रहा है कि अब गिरा — अब गिरा। इसी सघर्ष मे मेरी आखे खुलीं । शरीर पसीने मे लथपथ था । मैं उठ बैठा । कलेजा धक-धक कर रहा था ।

मैं कब तक जगा रहा । कब तक चितन चला । कब नीद आई । मुझे याद नहीं पर जगने पर समझ मे आया कि नीद मे था । स्वप्न देखा था । सवेरा हो रहा था । गाडी जोधपुर जक्शन पर पहुँची थी । मेने अपने डिब्बे का दरवाजा खोला । मेरे वहाँ के मित्र मिलने आये थे । पिछली सारी बात भूल कर मैं उनसे मिलने मे अभिवादन स्वीकारने मे लग गया । वहाँ गाडी काफी समय रुकती थी। मैं प्रातःकालीनचर्या से वहीं निवृत्त हुआ । दोस्तो के साथ नाश्ता किया । गाडी रवाना होने का समय आया । मेरे एक स्नेही मित्र ने लच पेकेट मुझे थमा दिया । कहा — इसका आनद लेते जाना।

मेरी गाडी रवाना हो गई । दिन भर की यात्रा थी । रात 10.45 बजे रेल मेरे गृहस्थान पर पहुँची । मेरे कुटुम्बी मित्र और हितेच्छु बाट जोह रहे थे । कुछ हल्की-फुल्की बाते हुई । मैने भी कहा लोट के बुद्धू घर को आये । घर पहुँचते-पहुँचते मध्यरात्रि का समय हो गया । घर के सभी सदस्य परम प्रसन्न । मेरी माता अत्यत प्रसन्न । कुछ खाना खाया । सो गया।

चोतीस साल बाद इतना निश्चित होकर सोया था ।

2

नई शुरुआत

प्रात जगा । स्वतत्रता का नया सवेरा। मेरे घर पर मेरे लिए यह प्रथम सवेरा था । मुझे नजर आया कि शौचालय की कमोड सफाई मागती है । स्नानागार से निकलने वाली नालिया गदी हो रही हैं । मैंने इनकी सफाई का काम बडे इत्मीनान से किया । कमोड को चमका दिया । नालियाँ बिल्कुल साफ। सफाई को देख मेरा मन प्रसन्न हुआ । मैंने माना कि घर के लिए स्वय को उपयोगी सिद्ध करने को यह कार्य अच्छा है। फिर प्रात कालीन चर्या से निवृत्त हुआ। स्नान किया । पूजा–पाठ सम्पन्न किया । भोजन किया । अब मैं अपने मन व मर्जी का मालिक था।

मेरी अपनी एक मोपेड थी । वह भी ऐतिहासिक मोपेड । उदयपुर मे वह पहली 'सुवेगा' थी। जयपुर से खरीद की थी । चौदह–पद्रह साल पहले की बात है । बाद मे बजाज स्कूटर आ गया । पर मैने उसको चलाने से निवृत्ति लेली । सुवेगा हल्की–फुल्की गाडी । घर पर कभी कभार काम आती । उसकी झाडा–फूकी की । कुछ हिस्से रगड–रगड कर साफ किये । घर से बाहर निकाली। कई दिन बाद उस पर सवार हुआ। उस चौराहे पर पहुँचा जहाँ सध्या को हम मित्र मिला करते थे। आज दोपहर थी । टोडावत पान वाले की दूकान पर पहुँचा । दूकान से सटी एक बैंच थी । उस पर सेवानिवृत्त अग्रज मेरे मित्र चौधरी जी बैठे थे। पुराने स्वतत्रता सेनानी। गौर वर्ण लम्बा कद सिर के बाल पके हुए खादी का कुर्ता इकलगी धोती कोल्हापुरी चप्पले तम्बाकू का पान मुह मे दबा हुआ प्रसन्न मुद्रा और उनकी जबान पर हमेशा कोई न कोई चुटकला जो मुलाकात मे रस घोलता रहता है। मुझे देखकर कहकहा लगाया। हमने एक दूसरे का अभिवादन किया। वे बोले – निपटा आये। मैंने कहा – हा ! सरकार के काम निपटा आया। उत्तर मिला तब फिर ठीक है। आपका स्थान खाली पड़ा है। इस स्थान को ग्रहण (एस्यूम) कीजिये। मैं बैच पर बैठ गया।

चौधरी जी ने मजाकिया लहजे मे पूछा – क्या खोया क्या पाया ?

मैंने उनको गिनाना शुरू किया। मैने कहा – खोने को मात्र तीन बाते हैं– सरकारी नौकरी उससे जुडा दायित्व बोझ और सरकारी काम । परन्तु मुझे मिला बहुत है। मै अपने नगर मे आ पहुँचा। अपने पैतृक गृह मे स्थाई रहना मिला है। ऐसा रहना जिसके लिए पहले तरसता था । मै अपने सयुक्त कुटुम्ब का स्थाई

सदस्य बन गया । इसकी सेवा का मुझे पूर्णकालिक अवसर मिला है। मुझे आप जैसे पुराने मित्र मिले । इन सबका साथ मिला। मुझे वे सभी बाग–बगीचे गोष्ठीस्थल धार्मिक स्थान शैक्षिक–सस्थाए और साधु–सतो की धूणिया जिन पर सत्सग का लाभ और आनद दुर्लभ हो चुके थे अब सहज प्राप्त हैं । इनके अलावा भी मुझे बहुत कुछ प्राप्त हुआ है कहाँ तक गिनाऊँ । इनमे भी सबसे बडी प्राप्ति तो यह कि प्रतिदिन सवेरे तैयार होकर कार्यालय पहुँचने की बदिश से मुझे मुक्ति प्राप्त हुई है। इन प्राप्तियो से मैं प्रसन्न हूँ। आनदित हूँ। आह्लादित हूँ।

चौधरी जी ने कहा बस बस बस ! अब मेरी सुनलो। यहाँ आने वालो का अपना चेटक–क्लब है। सदस्यता–शुल्क मात्र इतना कि सदस्य को रोजाना यहाँ आना पडता है। यो तो जब चाहो तब आ जाओ पर सध्या सात बजे ज्यादातर सदस्य यहाँ मिलते हैं।

मैंने उत्तर मे कहा सूचित हुआ।

लोग आते रहे। जाते रहे। हसी मजाक होती रही। मैं वहाँ काफी देर तक बैठा। फिर सीधा घर आया।

मैं चेटक–क्लब मे शामिल होने लगा।

दो दिन बाद मेरे जैसे सेवानिवृत्त अग्रजो के सुझाव पर मैंने अपने आवास पर जलपान का आयाजन किया। सध्या चार बजे सभी इकटठे हुए। उनकी सख्या 8–9 होगी । आठ बजे तक कार्यक्रम चला। समय बडी मस्ती से गुजरा। चलते–चलते एक मित्र ने कहा – अब काम वाले यहाँ नही आवेगे। हम जैसे बेकार लोग आवेगे। जमे रहेगे घटो । मकान के पैसेज मे खुलने वाला यही कमरा अच्छा है। इसमे सब सुविधाए जुटाइये। दूसरे ने कहा – अब यही आपका कार्यालय है। तीसरे ने कहा – कार्यालय नही आश्रम । चौथे ने कहा– आश्रम नही तपोभूमि। लोग विसर्जित हुए । उनका सुझाव व्यावहारिक था । मुझे भी अच्छा लगा। मैंने अपनी बैठक को सुविधाजनक बनाना तय किया। यह सच था कि मित्र अब लम्बे समय तक बैठेगे। उनको सुविधा तो मिलनी चाहिए। इस बैठक मे पूजास्थल व्यासासन जरूरी फाइले सदर्भ साहित्य लायब्रेरी *कपबोर्ड शायिका लेखन सामग्री आगन्तुको के लिए स्थान पानी की* मटकी पानदान टेलीफोन आदि की सुविधाए सहज एव व्यवस्थित रूप से उपलब्ध हो। एक ही कक्ष मे य सारी सुविधाए जुटानी थी। उनको ऐसा अवस्थित करना था कि बार–बार जरूरत की सामग्री सन्निकट ओर कभी कभी उपयोग की सामग्री उनके उपयोग के अवसरो के आधार पर इतनी निकट या दूर हो कि जरूरत पडने पर न्यूनतम श्रम से वे उपलब्ध हो सके। ऐसा करना टेढी खीर था। पर करना था। मेरा मस्तिष्क इस दिशा मे चितन करने लगा।

चायपार्टी के दूसरे दिन प्रात काल मे नाथद्वारा रवाना हो गया। वहा मेरे इष्टदेव श्रीनाथजी का मदिर है। बस से 50 किलोमीटर की यात्रा थी । राजभोग के दर्शन मे दर्शनार्थी बना। दर्शनार्थी के रूप मे आज का मेरा स्वरूप भिन्न था। आज मैं दर्शनार्थी के अलावा एक प्रार्थी भी था। मैने इष्टदेव से निवदेन किया प्रभु ! अब तक आपके और मेरे बीच म 'सरकार' थी मैं उसका सेवक था। उसकी सेवा करता था। बडे मनोयोग से उसकी सेवा करता । आनद भोगता था। अब बीच मे वह सरकार नहीं है। अब आपका मेरा सीधा सम्बन्ध है। अब आपकी शरण मे हूँ। आपका सेवक हूँ। आपकी सेवा भी पूरे मनोयोग से करूँगा। आपकी कपा का आनद भोगूगा । हर साल जनवरी के प्रथम सप्ताह मे आपको उपस्थिति दिया करूगा। वह मेरी साल भर की हाजिरी होगी। अब आपको मेरी चिता करनी है। और मै ज्यादा कुछ नही कहता। सुन लिया ?

और मैंने मान लिया कि सुन लिया। इस मान लेने मे मेरा अनुभव रहा है। जब कभी इन दर्शनो मे मे प्रार्थी हुआ । मैंने कोई प्रार्थना की। जरूर सुनवाई हुई। श्रीनाथजी का राजभोग मे स्वरूप राजा का होता है।

मैं मदिर से बाहर आया। नाथद्वारा के कई मित्रो से मिला। वही नाथद्वारा मे एक सिद्ध सत भूरी बाई का स्थान है। स्थान का नाम अलख आश्रम है। मैं अलख आश्रम गया। महात्मा बाई के दर्शन किये। उन्होने प्रसन्नता व्यक्त की। मैंने अपनी कहानी सुनाई । श्रीनाथजी को जो कुछ सुना आया उनको भी सुनाया। वे गभीर प्रकति की थी। परन्तु मेरी बात पर वे भी हस पडी। बोली — थे हाऊ कीदो । मैने मेवाडी बोली मे उत्तर दिया — और जदी कई करता। उन्होने मुझे भोजन करने को कहा। मैने आदेश का पालन किया। भोजन करने बैठ गया। भोजन करते हुए में सोचता जाता था — सेवा निवृत्ति के पश्चात भोजन स्थल किसी आश्रम के अलावा और कोई हो ही कैसे सकता है।

मैं आश्रम से खुशी–खुशी विदा हुआ। वापस मदिर गया। मदिर मे चढाई भेट के उपलक्ष मे प्रसाद वहाँ से प्राप्त किया । बस स्टेड गया। रवाना हुआ। आठ बजे रात घर आया।

मुझे दिली खुशी थी । सरकार ने तो मुझे अपनी सेवा से निवृत्त कर दिया था। परन्तु आज पाचवे दिन मैंने एक बडी सरकार प्राप्त करली थी। खोई हुई से बहुत बडी। इतनी बडी कि जिसके पास मेरी खोई हुई सरकार भी नाना रूप मे और नाना विधि से अपनी खैर मनाने हाजिर होती है। मेरे अन्तर्मन का एक बडा खालीपन भरा–भरा महसूस होने लगा।

मुझे मित्रो की जलपान के दिन कही बाते बार–बार याद आती ! अब आपके यहाँ बेकार लोग आयेगे। घटो जमे रहेगे। मकान के पसेज मे खुलने वाले कमरे मे सब सुविधाए जुटाइये।

मै इसी काम मे लग गया। पूरी सूझबूझ से काम किया। इस काम मे काफी समय लगा। परन्तु मेने कार्यालय को सम्पन्न और व्यवस्थित बनाया। जो सुविधाए सरकारी कार्यालय मे थी मैंने यहॉ जुटाई। मैंने और भी बहुत कुछ जुटाया। वह भी जो वहॉ नही था। एक ही कमरे म बार–बार जरूरत की वस्तुए हाथ बढाते ही मिले। वस्तुओ की दूरी उनके उपयोग के अवसरो की दृष्टि से अवस्थित की गईं। बार–बार उपयोग की वस्तुए सब से नजदीक। कभी–कभी उपयोगी की सबसे दूर। मेरा आसन छ फुट लम्बा। तीन फुट चौडा । दो फुट ऊँचा। ऊपर एक गद्दा। बीच मे एक तकिया। पीछे एक रगीन पर्दा। सामने एक टेबिल। पान–दान आसन के बाईं ओर। उससे आगे पानी की मटकी दो–तीन गिलास। आसन की दाईं ओर स्टेशनरी । दाईं और आगे दीवार पर एक कबोर्ड। इसमे बार–बार जरूरत की सभी वस्तुए। इसी मे शब्द कोश। नीचे एक टी–टेबिल। आसन की बाईं और एक गद्दीदार सीट ओर सोफा अगन्तुको के बैठने के लिए। दाईं और एक दीवान। दीवान पर दो गोल तकिये दीवाल के सहारे रखे हुए। मेरे शयन और आराम के लिए। आसन के सामने दीवान की खुली अलमारी। इसमे कई देवताओ की मूर्तिया और चित्र। जैसे दरबार लगा हो। उस अलमारी के बगल की दीवार सिद्धगणपति का बडा रगीन चित्र। अगल–बगल की अलमारियो मे पुस्तके और फाइले तरतीबवार। बीच मे खाली जमीन पर लिनोलियम का बिछौना। मुख्य द्वार से प्रवेश करते ही दाईं ओर मेरे इस कायालय का प्रवेश द्वार था। अगन्तुको स घर वाला का काइ असुविधा नही। प्रवशद्वार की बाइ ओर टेलीफोन का स्थान। मेरे आसन से सबसे दूर। कोई टेलीफोन करने आवे घर का हो या बाहर का टेलीफोन करे। चला जाये। मुझे कम से कम विक्षेप हो।

मेरा आवास चौराहे पर। मुख्य द्वार पूर्व की ओर। मुख्य द्वार के बाई ओर श्रीनाथजी की हवेली का मार्ग आगे सब्जी मडी फिर आगे किराणा बाजार। दाईं ओर सत्यनारायण–मार्ग। आगे गुलाबबाग । और आगे उदयपुर की झीलो को जाने वाला रास्ता। दाईं ओर बगल से पीछे की ओर पुरानी बस्ती के कई मुहल्ले। फिर आगे महाराणाओ के ऐतिहासिक महलो को जाने वाले रास्ते। सामने सूरजपोल मार्ग बापू–बाजार बैक रोड और आगे विश्वविद्यालय। मित्रो और हितैषियो के लिए सहज पहुँच का स्थान मेरा आवास। आते–जाते मित्रो को मिलने के लिए मैं सदैव ही सुलभ। आवास के मुख्य द्वार पर घटी का स्विच। मेरे कार्यालय की अपनी एक ओर घटी। मुख्य द्वार की घटी की शुक जेसी आवाज। वह बजे तो मैं द्वार पर पहुँचता हूँ। म कायालय की घटी बजाता हूँ तो काइ अन्दर से आता है। मरी आवश्यकता पूछता है। आवश्यकता ज्यादातर चाय–नाश्ते की होती है। वह पूरी की जाती है।

उदयपुर नगर मे ऐसे अवस्थित आवास मे अपने आपमे सुसम्पन्न परिपूर्ण और स्वतत्र मेरा कार्यालय था।

श्रोताओ को एक निश्चित दृष्टि बिन्दु की ओर ले चलूँगा और फिर कैसे समाहार करूँगा। इतनी मशक्कत किये बिना आज तक कभी मै भाषण देने नही गया। किसी सभा–सोसाइटी मे मेरा नाम बोलने के लिए अप्रत्याशित रूप मे घोषित हो जाता तब भी नाम की घोषणा होने और स्टेज पर पहुचने के अन्तराल मे मैं कुछ सकेत अवश्य लिख लेता। मेरी आदत है कि घर के बाहर जब कभी निकलू कागज और पेन मेरी जेब मे जरूर हो। ऐसा मैंने उस दिन से शुरू किया जिस दिन किसी विचारक के ये शब्द मैने पढे थे – अनमोल विचार जब कभी तुमको सुनने या पढने को मिले तत्काल उनको कागज पर कैद करलो बाद मे अवसर आवे न आवे।

मैं आसन पर बैठकर पत्र व्यवहार करता। जिस किसी का पत्र आता उसका उत्तर देता। दीपावली नये साल और सालगिरह पर शुभकामनाओ के पत्र आते। ध्यान से उनके उत्तर देता। ऐसे उत्तर कि भेजने वाले का पत्र लिखना उसके आनद का कारक बने। उत्तर से मैं उनको उनके प्रति मेरे सम्मान का अहसास कराता। मेरी मान्यता है कि पत्रोत्तर के द्वारा उत्तर देने वाले का व्यक्तित्व पत्र पर उतर कर सामने वाले तक पहुँचता है। जब ऐसा होता है तो पत्र व्यवहार जीवन्त रहता है। बना रहता है।

मैं स्वाध्याय करता। पुस्तके खरीद के पढता। माग के पढता। खरीदवा कर पढता। इनके पढने का उद्देश्य स्वय का विकास था। खासकर आध्यात्मिक विकास। इसके लिए सिद्धो और सतो की जीवनियाँ और अनुभव मुख्य थे। पुस्तके मुझसे पढवाई जातीं। राजस्थान साहित्य अकादमी मुझे साहित्यिक पुस्तके भेजती। य मुझे समीक्षार्थ प्राप्त होतीं। इनको मै ध्यान से पढता। समीक्षा लिखता। ये समीक्षा उनकी मुख पत्रिका म प्रकाशित होती। मुझे शिक्षा विभाग (राजस्थान) पुस्तके भेजता। विभाग उन पुस्तको की मुझसे समीक्षा करवाता। इस समीक्षा का उद्देश्य होता यह बतलाना कि पुस्तक का स्तर कैसा है । कौन सी पुस्तक शिक्षण सस्थाओ के किस या किन स्तरो के लिए उपयोगी होगी। इस समीक्षा मे यह बतलाना जरूरी होता कि पुस्तक मे कही कोई अश्लील साम्प्रदायिक या राष्ट्रविरोधी पक्तिया या पृष्ठ तो नही है। इसके लिए पुस्तक का एक–एक शब्द पढना जरूरी होता। मैं ऐसा ही करता।

अध्ययन का एक आयाम और भी था। हम लोग भारतीय दर्शन के ग्रन्थो का वाचन करते। रामायण कृष्णायन भागवत योगवासिष्ठ ईशावास्योपनिषद् आदि कई ग्रन्थ बारी–बारी से पढे। इनके हमने दो–दो तीन–तीन पारायण कर डाले।

स्वाध्याय और सौपा हुआ अध्ययन मैं अकेला करता था। अत जब भी समय मिलता पढने लगता। परन्तु दर्शन ग्रन्था के वाचन का समय भोजन के पश्चात् रात्रि का होता था। यह दस–ग्यारह बजे तक चलता।

मानसिक दृष्टि से स्वस्थ रहने हेतु मैं साधना करता। साधना एकान्त मे होती है। ऐसा एकान्त जहा विक्षेप न हो। साधना शुद्ध वातावरण मे होती है। ऐसा शुद्ध जैसा पहले आश्रमो मे होता था। साधना मे स्थान विशेष मदद करता है। ऐसा स्थान विशेष जहा पहले साधना हुई हो। ऐसा स्थान मेरे आवास से थोडी दूर पर गुलाबबाग है। मैं शुरू मे वहा जाया करता था। बीच मे जाना छूट गया। सवेरे जल्दी जाता । अकेला जाता । तैयार होकर जाता। इतना तैयार कि जेब मे परिचय कार्ड भी होता। कागज–पेसिल होती। कुछ सिक्के होते। जाप की गिनती के लिए माला होती। अतिसामान्य पोषाक -- कुर्ता पायजामा। घर से निकलते ही प्रणव मत्र का जाप शुरू करता। वायुसेवन करता। जाप करता। कोई बात करने आता तो इशारे से उसे रवाना करता।

यहा एक कमल तलाई है। उसमे कमल खिले रहते। उसके आस–पास कइ पत्थर की बैंचे। ऊपर आम्रवृक्ष। हरियाली ही हरियाली। आश्रम जैसा वातावरण। मैं वहा जाकर बैठता। नादब्रह्म की उपासना करता। करीब एक घटा लगाता। मेरा मन आनद से भरपूर हो जाता। आत्मविश्वास लेकर घर लौटता।

रात्रि को शयनपूर्व 'ध्यान' करता। सकल्प रहित स्थिति बनाता। आत्मस्वरूप मे स्थित होने का यत्न करता। मन को शाति प्राप्त होती। आन्तरिक आनद की अनुभूति होती। सो जाता।

मे शारीरिक स्वास्थ्य के प्रति भी सजग था। स्वास्थ्य का मोर्चा सर्वोच्च है। स्वस्थ शरीर मे ही स्वस्थ मन। स्वस्थ शरीर से इच्छा–शक्ति का विकास। साधना और सिद्धि की प्राप्ति इसीसे। स्वस्थ शरीर के द्वारा ही सामाजिक सम्बन्ध। समाज सेवा का भी यही माध्यम। स्वस्थ शरीर ही जीवात्मा का सर्वप्रथम सेवक। इसी के द्वारा स्वावलबन सभव। यही दिग्दिगन्तर मे विजय का माध्यम। स्वस्थ शरीर ही उसके सार्थक उपयोग का साधन। यह सब मैं समझता था। मैं यह जानता था कि नौकरी ने मेरे शरीर को खुर्द–बुर्द किया है। आखिर चौंतीस वर्ष की नौकरी थी। मैंने सोचा कि इस खुर्द–बुर्दगी का भी लेखा जोखा होना चाहिए। सवानिवृत्ति क तीसरे–चोथ दिन म चिकित्सालय पहुँचा। मुख्य चिकित्सक मेरे पूर्ण परिचित थे। मेरे पूर्व अधिकारी के जामाता थे। इस कारण निकटता रखते थे। सामान्य शिष्टाचार पूरा हुआ। उन्होने पूछा – आप कैसे पधारे ? मैने कहा – डाक्टर साहब ! आप जानते हैं मैं सेवानिवृत्त हो चुका। मेरी स्वास्थ्य–जाँच कीजिये। मुझे मार्गदर्शन दीजिये। डाक्टर ने पूछा – आपको कोई बीमारी ! मैंने

कहा – कुछ नही। उन्होने पूछा – आप कैसा महसूस करते हैं ? मैंने उत्तर दिया – बिल्कुल ठीक। डाक्टर ने कहा – तब आपको जाच की जरूरत क्यो पडी। जाच तो जाच होती है। कोई न कोई कमी या बढत तो जरूर निकलेगी। आप यहा से किसी बहम को लेकर लौटेगे। आप पधारिये। स्वस्थ है। स्वस्थ रहिए। मैं लौट आया।

यह प्रकरण स्वास्थ्य का था। मुझसे न रहा गया। मेरे एक महरबान वैद्य थे। वैद्य भागीरथ जी। वे नाडी वैद्य थे। उनके घर गया। उनसे नाडी परीक्षण कराया। उन्होने तीन नुस्खे बताये। पच रत्नानी चूर्ण – सध्या को भोजन पूर्व लेने के लिए। दूसरा बिना परहेज का नीम। हर साल चैत्र मास मे तीन दिन पीने के लिए। तीसरा नुस्खा ठडे जुलाब का। हर साल सर्दी मे लेने के लिए। तीनो नुस्खा को मैंने डायरी मे लिखे। आभार व्यक्त किया। चला आया। वैद्यजी के सुझाव पर पालन शुरू किया।

मैं सोचता प्राकृतिक चिकित्सा का भी लाभ लेना चाहिए। कई दिनो से वाष्प–स्नान की इच्छा थी। प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र गया। उनकी एक क्रमिक व्यवस्था है। पहले नीबू का एनेमा लगा। शरीर की मालिश की गई। वाष्प स्नान दिया गया। इसमे 15 मिनिट लगे। फिर ठडे पानी का स्नान शुरू हुआ। इसके पश्चात् मुझे कम्बल ओढाई गई। पलग पर सुलाया गया। पद्रह मिनिट मैंने आराम किया। मेरा शरीर हल्का हो गया। मन प्रसन्न हुआ। यह अनुभव मजेदार रहा।

सेवानिवृत्ति का दूसरा वार्षिकोत्सव निकट था। इन्हीं दिनो स्वामी नित्यमुक्तानद सरस्वती उदयपुर पधारे। ये पूर्ण योग केन्द्र (हरिद्वार–ऋषिकेश) के सस्थापक थे। इन्होने एक योग प्रशिक्षण शिविर आयोजित किया। अवधि पद्रह दिन थी। मैंने भी इस सुयोग का लाभ लिया। इसमे आसन प्राणायाम नैति त्राटक योगनिद्रा मानस यात्रा आदि का अभ्यास दिया गया। शख–प्रक्षालन क्रिया का अतिम स्थान था। यह आमाशय ओर आतो की सफाई की प्रक्रिया है। आतो की ऐसी सफाई कि मुह से पानी पीने पर शौच के रूप मे वैसा ही पारदृश्य पानी बाहर निकलने लगा। इस प्रक्रिया के पश्चात एक विशेष प्रकार का दलिया खिलाया गया। शिविरार्थियो ने यहीं आराम किया। प्रमाण–पत्र दिये गये। सध्या को घर लौटे। मेरी काया शुद्ध और चुस्त हो गई। इस शिविर से स्वास्थ्य की देखभाल मे विशेष कुशलता प्राप्त हुइ।

सतदर्शन और सत्सग मे मेरी रुचि पुरानी है। मै सरकारी यात्रा पर जाता। किसी नई जगह पर पदस्थापित होता। वहा के सतो का पता लगाता। दर्शन को जाता। किसी किसी के पास बार–बार भी जाता। ऐसा करना मेरे जीवन का अग

है। इसकी शुरूआत बहुत बचपन मे हुई थी। मैंने प्रथम दर्शन बालजी महाराज के किये थे। परमहस योगी थे। लम्बा कद। दुर्बल शरीर। श्याम वर्ण। पूर्णत निर्वस्त्र। घुटनो को सीने से अड़ाये बैठते। दोनो हाथो को घुटनो पर से आगे लटकाये रखते। गर्दन झुकी हुई । कभी कभी चलते। उनकी कमर झुक कर कमान जैसी। ज्यादा तर बैठे रहते। खाना वे खुद नही खाते। उनको खाना खिलाया जाता। कोई अपने हाथ से न खिलावे तो उनको खाने की जरूरत नही। जाति से हिन्दू थे। उनके दो भक्त थे। एक मुसलमान थे। नाम था मौलवी नैरग । दूसरे हिन्दू थे प्यारे लाल फोटोग्राफर । एक की राजदरबार मे बडी इज्जत। दूसरे धन से मालामाल। यह सबकुछ बालजी महाराज की कृपा से हुआ। सब लोग ऐसा मानते । ऐसे सत के दर्शन मुझे मेरे पिताश्री ने कराये थे। तब मैं पाच – छ वर्ष का था। दर्शन भी क्या यो कहिये कि वे मुझे उनके चरणो मे धोक दिलाने ले गये। ऐसे व्यक्तित्व को धोक मेरे लिए एक अजीबोगरीब घटना थी। मैं कई दिनो तक इस पर बाते करता रहा। आज भी बालजी महाराज मेरे दृष्टिपटल के सामने हैं। तब से आज तक मैं सतदर्शन करता रहा हू। कई सतो के दर्शन किये। किस–किस के नाम गिनाऊ ?

एक अग्रेजी कहावत मैंने पढी थी। उसका हिन्दी रूपान्तर है – भाई भगवान देता है मित्र इसान चुनता है। व्यक्तियो के आपसी चयन से मित्रो का एक अनापचारिक समूह बनता है। कोई बडा। कोई छोटा। ऐसे समूह के सदस्यो मे कुछ बाते समान होती है कुछ विशेष। समान बाते समूह को जुडा रखती है। विशेष बाते समूह को विशिष्ट बनाती है। प्रत्येक सदस्य की अपनी विशेष प्रतिभा सम्पन्नता समूह को अद्वितीय भी बना देती है। हमारे देश मे राजा भोज महान हुए हैं। चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य महान् कहलाये। मुगल सम्राट अकबर को महान् कहा जाता है। इनकी महानता का मैं एक गुर मानता हूँ। इनके दरबार मे नवरत्न थे। अपने–अपने फन मे माहिर । नौ दिग्गज। उनकी सलाह से वे राज करते। जिसको जिस काम मे महारत उसको वह काम सौपा जाता। सफलता हासिल होती। नतीजतन सम्राट महान कहलाये। साधारण इसान भी ऐसा कर सकता है। ऐसे मित्र वह चुन सकता है। न चुन सके तो ऐसो से मित्रता कर सकता है। आपसी लगाव आवभगत सुखदुःख मे साथ हसी मजाक पिकनिक – आनद का दरिया बहा सकते हैं । जीवन मे रग भर सकते हैं । मै जहा कही रहा ऐसे अनौपचारिक समूह को महत्व दिया। उसका सदस्य रहा। उसके लिए समय निकाला। समय निकल जाता था। सिर्फ एक ही काम करता। आफिस का काम आफिस मे मशक्कत से करता। घर का समय घर के लिए बचाता। उस समय मे मित्रो के साथ का भी लाभ लेता। अब मित्रो के साथ के लिए बहुत समय है। इनमे

प्रत्येक एक–एक रत्न है। मात्र एक मित्र के साथ के लिए भी मैं चलते काम को लबित कर देता हूँ। साथ हो जाता हूँ। अधिक मित्र हो तो कहने ही क्या !

धीरे धीरे लोगो को पता लगने लगा। एक व्यक्ति है। सेवानिवृत्त है। सुना है – नौकरी नही करेगा। एक–दो प्रस्ताव ठुकरा चुका हे। काम का है । फुरसत मे है। स्वायतशासी शैक्षिक सस्थाओ तक जानकारी पहुँची। सदस्य बनाने आने लगे। कुछेक का सहर्ष सदस्य बना कुछेक का मजबूरन सदस्य बनना पडा। सस्थाओ से जुड गया।

समाज के कार्यक्रमो मे भाग लेने लगा। शादी–ब्याह मगनी और बारात तक मे जाना जरूरी हो गया। नौकरी नही थी। लोग समझते – यह फुरसत वाला है। आग्रह करते। जाना पडता। शहर मे। बाहर भी।

कुछ चुनौती भरे काम मेरे कधो पर आ गिरे। एक–दो सगठन खडे करने का जिम्मा आ पडा। निभाना पडा। कुछ चुनौती पूर्ण दायित्व सामने आये। मित्र कहते – अगर आप ना करेगे तो कहा जावेगा ये कोरी बाते करते हैं। इन शिक्षा सेवा निवृत्तो मे कोई भी ऐसा दम–खम वाला नही है जो दायित्व सभाले। कुछ कर दिखाये। मित्रो का आग्रह स्वीकारना पडा। ऐसे दायित्व भी सभाले। घरेलू काम तो करता ही था। बाजार के काम भी मे ही करता। बीमारी मे दवादारू की व्यवस्था भी मेरे जिम्मे थी।

वैसे मैं बिल्कुल बेकार था। परन्तु फुरसत एक मिनिट की नही। नये सेवानिवृत्त मित्र पूछते – डाक्टर आप समय कैसे काटते है ? मै उत्तर देता – मुझे तो समय कटा–कटाया ही मिला है।

सच है। सम्पूर्ण सेवारत जीवन उस प्रकार के सेवानिवृत्त जीवन की तैयारी है जिस प्रकार के जीवन को वह जीना चाहता है।

और मैं सकटकालीन अवधियो को पार करने लगा।

सार घटना क्रम की एक–एक कहानी है। उसम स कुछक की कहानियाँ आगे कहूँगा। कुछेक को यह मान कर टाल दूगा कि अब तक जा कुछ कहा उससे पाठक अदाजा लगा लेगे।

आखिर वे पाठक हैं।

4

मित्रों की मैत्री

मेरे यहाँ मैत्री समूह तो हर कभी बनता रहता। एक दिन मे दो–दो तीन–तीन बार। मेरा आवास सहज सुलभ स्थान पर। कोई भी मित्र सामने से गुजरता तो मुझे अनुगृहीत करता। आवास मे प्रवेश करते ही मेरी बैठक। यह बैठक मेरी कार्य स्थली है। पढना लिखना या बातचीत इसके मुख्य अग। आगतुक कभी निराश नही होता। किसी एक मित्र के आते ही युग्म बन जाता। यह युग्म मैत्री–समूह कहा जाता है। यही सबसे छोटा अनौपचारिक समूह। कभी दो मित्र साथ–साथ आते। तब त्रिक बन जाता। त्रिक सबसे अच्छा अनौपचारिक समूह होता है।

कभी ज्यादा मित्र भी मेरी बैठक मे इकट्ठे होते। तभी हम लोग पिकनिक तय कर डालते। ऐसी पिकनिक मे 10 से 15 तक मित्र एकत्रित होते। अनौपचारिक समूह का यही व्यापक रूप था। सभी एक–दूसरे के मित्र। कुछ सदस्य आपस म निकट के मित्र। उनमे भी कुछेक एक–दूसरे के अतरग मित्र। मेरे भी एक–दो अतरग मित्र हैं। मित्रो मे सबसे पुराने मित्र। एक समय था जब यहाँ पानी–बिजली की व्यवस्था नही थी। कुए–बावडी से पानी लाते। उससे घरेलू जरूरत पूरी करते। नहाना–धोना घर के बाहर होता। इस काम के लिए ताल–तलैया थे। हम लोग कपडे तालाब पर धोते थे। हम तीन–चार मित्र साथ–साथ तालाब पर जाते। रविवार का सवेरा सामान्यत इसके लिए निश्चित था। कभी–कभार किसी दूर के तालाब पर जाते। तब खाना बनाने का सामान भी लेते जाते। कपड धोकर फैला देते। फिर खाना बनाते। नहाते। धुले कपडे पहिनते। खाना खाते। साईकिले दौडाते हुए घर आते। इस प्रकार मनोरजन होता। मैले कपडो की धुलाई होती। पिकनिक होती। सुखद सम्पर्क से अतरग मित्रता बनी थी। हमारे बडे अनौपचारिक समूह मे तब के मेरे भी दो–तीन अतरग मित्र आज भी हैं। ऐसे ही कइयो के कई अतरग मित्र। कई निकट के मित्र। सभी मित्र तो हैं ही।

मेरे मेवाड अचल मे कई प्राकृतिक स्थल हैं। प्रत्येक स्थल का अपना ऐतिहासिक महत्व। उसका आध्यात्मिक महत्व और अधिक। महत्व का आधार वहाँ के किसी सत के चमत्कार। उनकी कहानिया आज भी जनश्रुति का अग है। पूर्व मेवाड राज्य के महाराणाओ के वे सत मान्य और पूजनीय थे। ऐसे स्थानो को राज्य से अनुदान और सरक्षण प्राप्त था। उन स्थानो का समाज मे सम्मान था। लोग सत्सग के लिए वहा जाते। भक्ति करते। ज्ञान प्राप्त करते। ज्ञान को

हृदयगम करते। वैसा व्यवहार करते। सत्सगी बुजुर्ग घर और समाज को प्रभावित करते। चरित्र निर्माण का काम सहज रूप से चलता। चरित्र निर्माण के ऐसे कई स्रोत थे। इनका नाम वहाँ के पूज्य देवता ग्राम या पर्वत से शुरू होता। उसके पीछे तपस्या का प्रतीक शब्द 'धूणी' जुडा था। हम लोग ऐसी ही किसी धूणी पर पिकनिक करते। स्थान तय करने के पहले यह देखते कि कैसे चलेगे। चलने का माध्यम अपने–अपने दुपहिया वाहन है तो निकट का स्थान तय करते। दूर के स्थान पर जाना होता तो 'यजमान' को पहले टटोलते। वे जिस दिन गाडी ले चलते उस दिन जाते। कभी कभार रोडवेज की बस से भी जाना तय करते। पर पिकनिक जरूर करते। शुरू–शुरू मे पिकनिक जल्दी–जल्दी करते। साल भर मे छ सात बार तो सामान्य बात थी।

पिकनिक तो पिकनिक है। पिकनिक का मजा पिकनिक मे ही है। पिकनिक करने की बात मेरे कार्यालय मे ही उठती। जब चार–पाच मित्र इकटठे होते तो बात–चीत का एक विषय पिकनिक अवश्य होता। पिछली पिकनिक पर चर्चा करके मजा लेते। पिछली पिकनिक को कुछ समय बीता होता तो आगामी पिकनिक की योजना बनती। स्थान और दिन तय होने पर हमारा 'कोर ग्रूप' सक्रिय हो जाता। कौन–कौन चलेगा कितनी सख्या होगी क्या–क्या बनेगा सामान कौन जुटायेगा कहाँ इकटठे होगे कितनी बजे रवाना होगे चलने का माध्यम क्या होगा आदि आदि। गन्तव्य स्थान पर पहुचने पर साथियो की सक्रियता देखते ही बनती थी। सबसे पहला काम स्थान पर अधिकार जमाने का होता। अपनी जाजम बिछा देने से यह काम हो जाता। तब इत्मीनान से हम उस पर अपना–अपना सामान रख देते। फिर बातूनी मित्र बाते करने लगते। कोई चुटुकला सुनाता। कोई किसी घटना का जिक्र करता। कुछ आपस मे ही हसी–मजाक करते। तभी कोई सचेतक की भूमिका अदा करता। कहता – उठो–उठो ! कडे–लकडी बीनने चलना है। एक–दो खडे होते। तब वे ही महाशय किसी के सामने दाल की थैली रखते और कहते – अरे यार ! जरा देखलो। ककर–पकर हो तो बाहर निकाल दो। वे ही शेष साथियो के बीच हरी सब्जी और हरा मसाला रखकर कहते – "बाते करते जाओ। सब्जी काटते जाओ। मसाला साफ करते जाओ। तभी कोई सीनियर सम्मानित सदस्य किसी की ओर फबती कसता इन्होने नौकरी मे ही काम नहीं किया तो आज कैसे करेगे ! और उत्तर मिलता अब ये मेरा जमारा (जन्म) बिगाडने को क्यो तुले हैं ! आप इनको समझाओ न साहब। इस पर सभी खिल–खिला कर हँस पडते।

थोडी देर मे कडे–लकडी बीनने वाले साथी लौट आते। वे चूल्हा बनाने के लिए स्थान चुनते। ईंट पत्थर से चूल्हा बनाते। जलाते। उस पर दाल की पतीली चढा देते। अब दो–तीन साथी और उनके साथ जुड जाते। वे सभी भोजन

बनाने मे माहिर। तदनुरूप सामग्री बनाने का क्रम शुरू होता। बाकी व मित्र कुछ न कुछ करते रहते। ताश व शौकीन ताश खेलते। अतरग मित्र दुख-सुख की बाते करते। ऐसे अवसर पर मै अपना पान-दान ले जाता। मुझे बताया गया काम करता। पर पान की सेवा भी करता जाता। एक-दो ऐसे भी थे जो जाजम पर लेटे रहते। सबके क्रिया-कलाप देखते। ठिठोली करते। हँसते-हँसाते रहते।

भोजन तैयार हो जाता। उस स्थान पर मदिर या सत को भोग सबसे पहले भेजते। फिर हमारे भोजन की तैयारी होती। हम लोग गोलाकार बैठते। बीच मे सारी सामग्री रखी जाती। भोजन परोसा जाता। सहनाववतु ...... मत्र का उच्चारण होता। फिर हम लोग शुरू करते। भोजन की प्रत्येक वस्तु पर टिप्पणी होती। कैसी बनी ? क्या कमी रही ? किस-किस ने मिलकर बनाई ? कौन अगुआ था ? आदि आदि। भोजन के महत्त्वपूर्ण अग – मिठाई से लेकर चटनी तक की समीक्षा होती। भोजन का पूरा आनद लिया जाता। स्वाद से और समीक्षा से। तब सूर्यास्त हो जाता। बर्तनो की सफाई करते। सामान इकट्ठा करते। वापसी यात्रा शुरू होती। घर लौटते। गत पिकनिक के चर्चे चलते। तब तक जब तक नया आयोजन होता। अगर कोई विशेष घटना घटती तो वह बार-बार दुहराई जाती।

कुछ दूरी के स्थानो मे गौतमेश्वर हमारा पसदीदा स्थान है। रोडवेज की बसे उधर से गुजरती हैं । यह सडक से कुछ दूरी पर है। गौतम ऋषि की तपोभूमि है। भोजन बनाने के यहाँ कई स्थल हैं। एक सिद्धसत यहाँ रहते थे। सतसग का लाभ भी वहा मिलता था। कुछ दूरी पर जाना होता तो हम इस स्थान पर जाते। यहाँ की एक पिकनिक हमे आज भी याद है। उस दिन हम सात मित्र थे। लड्डू बाटी दाल-भात का भोजन बनाना था। हमने वहाँ पहुच कर कडे इकट्ठे किये । उनको व्यवस्थित जमाया जलाया और दाल चढा दी। तभी एक वृक्ष से मधुमक्खियाँ उडी। हमारे द्वारा प्रज्वलित अग्नि के पास आई। आस-पास मडराने लगी। सौभाग्य से हम लोग वहाँ से दूर थे। उनमे से चार-पाँच मधुमक्खियाँ हमारे तीन मित्रो तक पहुँची। वे और भी दूर एक तिबारी म बैठे थे। गप्पे ठोक रहे थे। जब वे वहाँ पहुँची तो हमको मजाक सूझी। किसी ने कहा वाह भाई वाह ! खूब पहिचाना। ये काम से बचने को दूर बैठ हैं । इनको आप ही समझाओ देवी भ्रामरी ! साथ ही हम उन मित्रा को निर्देश देते निश्चल शात बैठे रहो। हिलने-डुलने पर डक मार देगी। उन्होने प्रयत्न तो किया। परन्तु एक तो शिकार हो ही गये। उनकी आख पर एक मक्खी छत्ता बना गई । यह तूफान करीब पाच मिनिट तक चला। फिर शात हो गया। मधुमक्खिया चली गईं। शेष सबकुछ शाति से सम्पन्न हुआ। पर यह पिकनिक यादगार पिकनिक बन गई।

जलबुर्ज की एक पिकनिक भी यादगार है। उस दिन सब ठीक–ठाक था। भोजन बन चुका था। हम लोग खाना शुरू करने को थे। तभी एक पुराना शिष्य आया। बोला गुरुदेव ! नारगी मे छानी है। थोडी–थोडी ठडाई तो लेनी पडे। तीन–चार शौकीन साथियो ने थोडी–थोडी ठडाई ली। शेष ने मात्रा दस्तूर किया। भोजन किया। प्रत्येक के पास अपना अपना दुपहिया वाहन था। हम लोग रवाना हुए। थोडी दूरी पर ये तीन–चार साथी रुक गये। ये कहने लगे भग तो कई बार पी है। पर ऐसा पहले कभी नहीं हुआ । हेण्डिल डगमगाता है। रास्ता तक नजर नही आता । तय किया कि हम आगे चलेगे । ज्यादा से ज्यादा धीमी गति से चलेगे। ये हमारा मात्र पीछा करेगे। इस प्रकार ज्यो–त्यो घर पहुँचे। गनीमत यह थी कि इस स्थान की दूरी शहर से मात्र एक किलोमीटर ही है।

एक आख्यान और। हम लोगो मे एक सबसे सीनियर बुजुर्ग हैं। समृद्ध हैं। उदार हैं। मित्रो को निभा कर चलने मे माहिर हैं। उनके घर पर श्रद्धालुओ का ताता बधा रहता है। प्रत्येक की समस्या का समाधान उनकी जबान पर रहता है। जिसको कोई समस्या नही उसको सन्मार्ग के उपदेश वे बडी शालीनता से देते हैं। परन्तु इनसे हमारी एक ही शिकायत है। ये पिकनिक मे शामिल होते। परन्तु तब पहुँचते जब भोजन परोसा जा रहा होता। एक दिन नहीं हमेशा ऐसा होता। हम लोगो से इस बात पर खूब फुस–फुसाहट होती। परन्तु पिकनिक को हम इनके बिना बेरग भी नहीं कर सकते थे। अलबत्ता हमने एक रास्ता ढूँढ लिया था। पिकनिक तो चदे से ही होती थी। पर एक पिकनिक के खर्चे के वहन के लिए हम इनको पटा लेते। ऐसी ही एक पिकनिक का टीचर्स कालेज डबोक के गेस्टहाउस मे आयोजन था। हमारा कोरग्रूप सारी तैयारी के साथ वहाँ पहुँचा। करीब साढे–ग्यारह बजे होगे। हमने अग्रिम व्यवस्थाएँ की। गेस्ट हाउस के रसोइया सेवा के लिए सहज उपलब्ध थे। लडडू बाटी दाल–भात का भोजन बनना था। यह काम हमने उनको सौंप दिया। अब हमे फुरसत थी। थोडी देर बाते की। फिर ताश खेले। शहर से आने वालो का इन्तजार किया। दो बजे तक कोई नहीं आया। गन्तव्य स्थान पर पहुँचकर हम चाय बनाते थे। चाय–नाश्ता करते। फिर काम पर लगते थे। पिकनिक की यही हमारी शैली थी। किसी को न आता देख एक सदस्य ने कहा नाश्ते की तलब हो रही है। चाय जब पिलाओ तब पिला देना। हम पाच किलो रबडी लाये हैं। इसका नाश्ता तो हो ही सकता है । दूसरे ने कहा हम छ व्यक्ति अभी हैं । दो–तीन मुश्किल से और आवेगे। ये रबडी और इतना सारा खाना बन रहा है। मामला भारी है। अभी से ही शुरू करेगे तब काम निपटेगा। सभी सयाने एक मत। रबडी का नाश्ता किया गया। तृप्त हुए। अब शाति से ताश खेलने लगे। छ बजे वहाँ के संस्थान के प्रमुख पधारे। आज के यजमान अब तक भी नदारद थे। सात बजे तक

इन्तजार किया। फिर तय किया कि भोजन शुरू किया जाए। सात पत्तलें लगाई गईं। मात्र सात। मुझे पक्की याद है। लड्डू, बाटी, दाल-भात, रबड़ी परोसे गये। तभी एक जीप वहाँ पहुँची। गाड़ी से चार व्यक्ति उतरे। एक हमारे यजमान और तीन उनके मेहमान। चार पत्तलें और लगाई गईं। भोजन शुरू हुआ। हल्की-फुल्की मजाकें चलती रहीं। सारा काम सानंद सम्पन्न हुआ। बर्तन सामान वगैरा एकत्रित किये। बची हुई भोजन सामग्री यजमान की जीप में रखदी गई। रबड़ी वाला पात्र एक तरफ रखा था। यजमान ने रबड़ी का परोसना देखा था। उनका ख्याल था कि रबड़ी तो बहुत बची होगी। उन्होंने सचेत करके कहा ये पात्र भी लेता जाऊं। हम में से किसी ने कहा ले पधारिये। उन्होंने पात्र उठाया। उनके मुख से हठात निकला अरे ये तो खाली है। क्या किया तुम लोगो ने ? एक मसखरे ने तनिक निकट जाकर कहा एक पारी हमने दो बजे निपटा ली थी। सब लोग हंस पड़े। तब यह पिकनिक यादगार पिकनिक बन गई।

हम लोग कभी-कभी मटर-गश्ती पर निकल पड़ते। ऐसा कार्यक्रम आनन-फानन में बनता। एक अपने स्कूटर पर चलता। दूसरे स्कूटर या मोपेड वाले के घर जाता। वह मिला न मिला तो तीसरे के घर। फिर चौथा और पांचवा मित्र। जो मिले साथ हुए। चल पड़ते। उदयपुर शहर के सन्निकट दूधतलाई पहुँचते। फिर आगे बढ़ते खाराओदी सीतामाता शिकारमा महादेव अम्बामाता महाकाल और चेटक चौराहा पार कर घर आते। शहर की आधी परिक्रमा हो जाती। ऐसे कार्यक्रम जब तब बन जाते। कभी नाश्ता भी साथ लेते। इसका उपयोग किसी रमणीक स्थान पर करते। लौट आते।

इस प्रकार उदयपुर मंडल के आसपास के दर्शनीय स्थल हम बारी-बारी से नापने लगे। यह क्रम शुरूआती वर्षों मे खूब चला। परन्तु इस अनौपचारिक समूह मे घुसपैठ होने लगी। यह घुसपैठ औपचारिक समूहो की ओर से थी।

5

निवृत्तों का निवृत्तों से जुड़ाव

सेवा–निवृत्ति के बाद कई सगठनो ने मुझे सदस्यता के लिए आमत्रित किया। ये शैक्षिक सस्थाए थी। इनमे से कुछेक मुझे पसद थीं। मै उनका सदस्य बन गया। ये अपने–अपने उद्देश्यो के लिए काम कर रही थी। मैं भी उनको सहयोग करने लगा। उनकी दिशा मे चलने लगा। यह काम आसान था। वैसे ही जैसे किसी बनी–बनाई सडक पर चलना आसान होता है। या यो कहे कि किसी चलती गाडी मे बैठने पर यात्रा आसान होती है। परन्तु नया सगठन खडा करना कठिन काम है। उसमे भी निवृत्तो का निवृत्तो से जुड़ाव चुनौती भरा काम। उनको निश्चित उद्देश्यो पर चलाना असभव जैसा काम। लोगो को जुडे रखना जीवट का काम। उनको गतिशील बनाये रखना बडी सूझबूझ का काम। सगठन को कायम रख लेना चमत्कारिक काम है।

मित्रो के आग्रह से मैं ऐसी भूलभुलैया मे फस गया। सेवा निवृत्त अधिकारी एक सगठन मे गठित हो यह बात करीब डेढ वर्ष से चल रही थी। तब से जब मै सवानिवृत्त हुआ। स्थानीय मित्रो मे यह बात चलती। जब मैं बाहर जाता जब भी यह बात चलती। स्थानीय मित्रो के सकल्प को देखकर एक बैठक बुलाने का विचार बना। सहज सुलभ मित्र आमत्रित किये गये। बैठक हुई। भावी सगठन पर विस्तार से चर्चा हुई। यह एक अनौपचारिक बैठक थी। खुल कर विचार व्यक्त किये गये। कहा गया कि पहले तो किसी न किसी बहाने से सरकार मिला देती थी। अब तो मिलना दूभर हो गया। शहर मे तो आपस मे मिल सकते है। पर बाहर वालो स मिलने को तरसते हैं। कोई माध्यम चाहिए। जब हम ऐसा सोचते हैं तो शहर वाले भी ऐसा सोचते होगे। सगठन बनाओ। जिला स्तर के से काम नही चलने वाला। राज्यस्तरीय होना चाहिए। किसी ने कहा – यह शुभ पुष्कर मे होना चाहिए। तीर्थ करेगे। सत्सग करेगे। हसी मजाक करेगे। पुरानी बाते याद करेगे। वर्तमान को आनदमय बनाने का रास्ता खाजेगे। भविष्य की कोई अच्छी बुनियाद रखेगे। सभी ने विचार को सराहा। सक्रिय भागीदारी का वचन दिया। इस आधार पर एक तदर्थसमिति का गठन किया गया। सम्मेलन की तिथिया भी तय कर ली गई। अजमेर शहर के एक उत्साही सेवानिवृत्त उपनिदेशक को – प्रथम पुष्कर सम्मेलन का सयोजक बनाया गया। उनको अधिकृत किया गया कि वे सम्मेलन के लिए आमत्रण भेजे। सभी आवश्यक व्यवस्थाए भी करे। काम चल पडा।

सम्मेलन का आधार पत्र बनाना मेरे जिम्मे आया। स्थानीय साथियो से चर्चा की। कुछ साहित्य इकठठा किया। पढा। कुछ विचार सूचीबद्ध किये। उन पर बातचीत की गई। कदम-कदम पर सावधानी बरतनी थी। यो तो मैने राज्य शिक्षा सस्थान मे काम किया था। सेवारत पाठयक्रमो के आधार-पत्र बनाये थे। विभिन्न विषयो के शिक्षक विभिन्न स्तरो के शिक्षक विभिन्न प्रकार के अधिकारी विभिन्न स्तरो के अधिकारी-वहा आमन्त्रित होते। सेवारत पाठयक्रमो मे भाग लेते। मुझे ऐसे पाठयक्रमो के निदेशन के भी अवसर मिले थे। वह अनुभव मेरे पास था। पर वह मात्र सेवारत व्यक्तियो से सम्बन्धित था। सेवारत व्यक्ति से सम्बन्धित था। सेवारत व्यक्ति हुकुम से आते। ड्यूटी पर आते। कुछ नया जानने की भावना से आते। कुछ नियमित कार्यभार से राहत मिलने के विचार से आते। कुछ पूर्वाग्रहो से ग्रसित आते। कुछ ऐसे पाठयक्रमो को सरकारी चोचला मान कर चल आते। परन्तु सब यह मान कर आते कि सारा भार सरकार उठायेगी। उनको वृत्ति भी प्राप्त होगी। परन्तु जो कार्यक्रम मैं रच रहा था — वह अलग तरह का था। उसके लिय यात्रा ठहराव वापसी सारा भार खुद को उठाना था। वह भी तब जब उनकी वृत्ति बन्द हो चुकी थी। सब लोग निर्वृत्ति थे। ऐसी यात्राओ के वे अभ्यासी नही थे। प्रश्न था-क्या लोग आयेगे ? फिर भी सोचा गया कि तय किया है तो करना चाहिए। एक नया अनुभव होगा।

अब तो सम्मेलन का आधार-पत्र बनना ही था। लिखना शुरू किया। प्रथम सम्मेलन का आयोजन था। इसम कइ बातो को शामिल करना था। प्रस्तावना की शुरूआत उस पत्र की विषय वस्तु से की गई जो पहले भेजा गया था। उसके बाद कतिपय पक्षो के छुआ गया। इनके द्वारा सगठन की आवश्यकता प्रतिपादित की गई। याद दिलाया गया कि सेवानिवृत्ति पर अधिकारी अपने घर चला जाता है। चार-पाच साल तक वह अपने लोगो को याद रहता है। फिर लोग उसको भूलने लगते हैं। क्रमश वह भुला दिया जाता है। अकेला पड जाता है। अकेलेपन मे आदमी बूढा होने लगता है। बूढा कौन होता है ? जवान कौन रहता है ?

प्रश्न का उत्तर है — सेवानिवृत्ति जीवन की सक्रियता मे विराम ला देती है। विराम का अर्थ है — जडता निष्क्रियता। निष्क्रियता मे किसी भी वस्तु पर जग चढता है। जग वस्तु को भगार बनाती है। जो भगार बन गया। वही बूढा है।

दूसरे का उत्तर है — जीवन की सक्रियता मे आनेवाले विराम को रोकना। सक्रियता को बनाये रखना। सक्रियता का विकास करना। सक्रियता के द्वारा चेतन बना रहना। जीवन्त बना रहना। जीवन्त व्यक्ति ही जवान होता है।

हमारा दुर्भाग्य रहा है। हमने अपने वैयक्तिक जीवन को जीवन्त बनाये रखने का जिम्मा भी सरकार का माना। हमारे सामाजिक सम्मान की धात्री भी हमने सरकार को माना। सरकार या नियोजक के कारण ही हम उपयोगी थे समाज हितकारी थे। इसका अर्थ यह निकला कि हम अपने आप अकेले कुछ नहीं थे। यह सश्लेषण भ्रान्तिपूर्ण है। सचाई कुछ और है।

सचाई यह है। आप योग्य थे। इसी कारण नौकरी मिली। नौकरी ने आपका अनुभव बढाया। काम को सीखने के अवसर मिले। कुछ नया दिखाने के लिए सरकार ने यात्राए कराईं। आपकी कार्य कुशलता बढाई गई। अभिनव प्रशिक्षणो मे भेजा गया। आपकी काबलियत और बढी आपको ऊचे-ऊचे पद दिये गये। सरकार या नियोजक ने आप पर कितना निवेश किया इसका कभी आकलन कीजिये। आपको लगेगा कि आप बहुत मूल्यवान हैं। इतना मूल्यवान् बनाकर आपको सेवानिवृत्त किया गया है। अत आप अब भी उपयोगी हैं। अपने लिए' घर के लिए। समाज के लिए। शिक्षा के लिए सबको आपका लाभ मिले। आप शारीरिक दृष्टि से सतुलित हो। यह सबकुछ अकेले हो सकना कठिन है। इसलिए एक सगठन की आवश्यकता है। जिससे बीते जीवन की तुलना मे आपका भावी जीवन व्यापक रूप से हितकारी सिद्ध हो।

इसी भावना से सम्मेलन के उद्देश्य तय किये गये। तीन दिन का दैनिक कार्यक्रम बनाया गया। कार्यक्रम के विशेष पक्षो के लिए विशेषज्ञो को चर्चा भाषण और मार्ग दर्शन के लिए आमत्रित किया गया। योजनानुसार सम्मेलन आयोजित हुआ। सम्मेलन की कार्यसूची मे पाच पक्षो को स्थान दिया गया। ये थे- सेवानिवृत्ति जीवन की उपयोगिता समसामयिक शिक्षा के मुख्य आयाम जीवन मे आध्यात्म का महत्व सहभागियो के आपसी अनुभवो का आदान-प्रदान और अनुरजनात्मक कार्यक्रम।

इस सम्मेलन मे तीन दिन तक विभिन्न सत्रो के अध्यक्ष एव मुख्य अतिथि के रूप मे माध्यमिक शिक्षा बोर्ड अजमेर के तत्कालीन अध्यक्ष एव दो पूर्व अध्यक्षो को आमत्रित किया गया था। वे सभी पधारे। उन्होने सगठन का सम्मानित सदस्य होना स्वीकारा। सम्मेलन का गौरव बढा। कार्यवाही का स्तर समुन्नत हुआ। अपेक्षित फलित गहन हुए। व्यापक बने। मूल्यवान् और दूरगामी बनाने मे मदद मिली।

सम्मेलन मे कई काम हुए। कई निर्णय लिये गये। सगठन का नामकरण हुआ। शिक्षा सेवा निवृत्त अधिकारी सघ – राजस्थान नाम रखा गया। विधान स्वीकारा गया। सस्था को रजिस्टर कराना तय किया। कार्यकारिणी चुनी गई। सारे राज्य मे प्रसार निश्चित हुआ। जिले-जिले मे शाखाए खोलने का निर्णय लिया गया। राज्य स्तर पर दो साल मे एक बार सम्मेलन की बात तय हुई।

धमका। चुपके से कक्षा मे आया। आखिरी कतार मे बैठ गया। निरीक्षक को जो उसे देखना था। निरीक्षक ने कक्षा से एक प्रश्न पूछा। प्रश्न का उत्तर किसी से न बना। घसीटा बार–बार हाथ ऊचा करे। अत मे उसका भी नम्बर आया। घसीटा ने सही उत्तर दिया। उसने कक्षा की लाज बचाई। उच्छृखल कुशाग्र बुद्धि होते हैं । यह बात वे कहानी से प्रमाणित करते। ऐसी ही अनेक कहानिया वे सुनाते। हसी ठटठा म माहिर । सेवा निवृत्तो मे इस स्तर के जिन्दादिल वे मात्र एक थे। ऐसे अध्यक्ष की कार्यकारिणी के सदस्य भी किसी से किसी कदर कम नही। एक–एक का अपना–अपना करीना। हर एक अपने–अपने फन मे माहिर।

इस सम्मेलन ने कई कार्यक्रमो के आयोजनो की सभावनाए जागृत की। जिनके केन्द्रीय बिन्दु तीन थे – शैक्षिक आध्यात्मिक और अनुरजनात्मक। इसके अतिरिक्त राजस्थान पेशनर समाज द्वारा राज्य सरकार और वेतन आयोग को प्रेषित मागो का समर्थन किया गया। यह तो हुई औपचारिक कार्यवाही की बात। साथ ही तीन दिनो का अनौपचारिक सामूहिक जीवन अपने आप म अनमोल था। इसने प्रसन्नता और आनद का सचार किया। वर्षों के बाद मिले थे। ऐसा मिलन जिसमे सभी ने एक दूसरे को ठहाके लगाकर अभिवादन किया। चौबीसो घटे साथ रहना। पुष्कर ताल पर सबका सामूहिक स्नान। देवदर्शन को साथ–साथ जाना। जलपान–गृहो पर नाश्ता करना। प्रीतिभोजो के नमूनो का भोजन सवेर–शाम लगातार तीन दिन तक। वर्षो से न सुने हुए चुटकला और आख्यायिकाओ का श्रवण। हसी–मजाक। इस सम्मेलन के ऐसे अनुरजनात्मक पक्ष थे जिन्होने सम्मेलन की सफलता मे चार चाद लगा दिये।

सम्मेलन समाप्त हुआ। सहभागी सक्रियता के द्वारा जीवन्त बने रहने के कर्तव्यबोध के साथ विदा हुए। मेरा कार्यालय अब शिक्षा सेवा निवृत्त अधिकारी सघ राजस्थान का कार्यालय भी बन गया। मैं महामत्री चुना गया था।

तीन दिवसीय आवारा – बागड सस्कत कालेज मे। सस्कत कालेज एक ऐतिहासिक स्थल बना। सस्कत भारत की पुरानी भाषा। सहभागी शिक्षा विभाग के पुराने अधिकारी। मणि–काचन सहयोग। एक और बडी बात। सेवा निवृत्त पढने नही जाता। क्यो जावे ? पर यहा असमव सभव बना। नय सेवानिवृत्तो ने अपने अग्रज सेवानिवृत्तो से 'सेवानिवृत्ति समझी। सदुपयोग का मार्ग जाना। सुखी बनने का अहसास जगाया। आगे पढाई चालू रखने का रास्ता खोला।

एक बडी बात और हुई। बिछडे साथी सगठन–सूत्र मे बधे। अपना नेता चुना। ऐसा नेता जो ऐसा का होना चाहिए। आयु मे सबसे ज्यादा लम्बा कद बलिष्ठ देह फुर्ती से भरपूर। किसी पहलवान से कम नही। उनकी पोशाक सफेद पेट और शर्ट थी। फुरसत मे वे सफेद कुर्त्ता और पायजामा पहिनते। उन्नत नासिका प्रशस्त ललाट नेत्रो से तेज बरसता था। उनकी दन्तपक्ति शुभ्र मुक्तापक्ति के समान चमकती थी। हमारे सबके बाल शुरु–शुरु मे काले फिर खिचडी और बाद मे चादी के समान सफेद होते हैं। परन्तु ये जन्म से ही बाल रहित जन्म जात महर्षि थे। मस्तक और मुखमडल अनवरत चमचमाता रहता। उनके गौरवर्ण को श्रेष्ठ स्वास्थ्य ने गुलाबी बनाया हुआ था। इसका राज बताते हुए वे कहा करते – मुझे पहले 'हार्ट अटेक हुआ था। तब से मैं आधे गिलास पानी मे 8–10 सूखे आवले रात को गलाता हूँ। सवेरे वह पानी 'रेड ब्लड जैसा हो जाता है। उसको छान कर पीता हूँ। उसी का यह चमत्कार है। उनका अग्रेजी भाषा पर अधिकार था। 'स्ट्रक्चरल एप्रोच के महारथी थे। कई पुस्तके लिखी थी। काफी रायल्टी प्राप्त होती थी। अपना ही एक 'पब्लिक स्कूल चलाते थे। आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न थे। उनका हसना किसी कहकहे से कम नही। बोलते तो शेरो–शायरी मे । उनकी याद से जुडे दो शेर याद आते हैं

डिनर खाते है नेता हुक्काम के साथ ।
गम तो बहुत है कौम का पर आराम के साथ।।

हजारो साल नरगिस अपनी बेनूरी पे रोती है ।
तब कही होता है चमन मे कोई दीदावर पैदा ।।

उनको असख्य कहानिया याद थी। हर बात का तालमेल व किसी कहानी से बिठाते। उसी से नतीजे निकालते। उनकी कहानी 'घसीटा' वे बडे लहजे से सुनाते। हम भी सुनते। बार–बार सुनते। सुनते सुनते पेट मे बल पड जाते। घसीटा एक उच्छखल विद्यार्थी। शिक्षा अधिकारी का निरीक्षण था। निरीक्षण के दिन अध्यापक ने उसको स्कूल आने से मना किया। पर ऐन वक्त पर वह आ

धमका। चुपके से कक्षा मे आया। आखिरी कतार मे बैठ गया। निरीक्षक को जो उसे देखना था। निरीक्षक ने कक्षा से एक प्रश्न पूछा। प्रश्न का उत्तर किसी से न बना। घसीटा बार–बार हाथ ऊचा करे। अत म उसका भी नम्बर आया। घसीटा ने सही उत्तर दिया। उसने कक्षा की लाज बचाई। उच्छृखल कुशाग्र बुद्धि होते हैं। यह बात वे कहानी से प्रमाणित करते। ऐसी ही अनेक कहानिया वे सुनाते। हसी ठटठा मे माहिर। सेवा निवृत्तो मे इस स्तर के जिन्दादिल वे मात्र एक थे। ऐसे अध्यक्ष की कार्यकारिणी के सदस्य भी किसी से किसी कदर कम नही। एक–एक का अपना–अपना करीना। हर एक अपने–अपने फन मे माहिर।

इस सम्मेलन ने कई कार्यक्रमो के आयोजनो की सभावनाए जागृत की। जिनके केन्द्रीय बिन्दु तीन थे – शैक्षिक आध्यात्मिक और अनुरजनात्मक। इसके अतिरिक्त राजस्थान पेशनर समाज द्वारा राज्य सरकार और वेतन आयोग को प्रषित मागो का समर्थन किया गया। यह तो हुई औपचारिक कार्यवाही की बात। साथ ही तीन दिनो का अनौपचारिक सामूहिक जीवन अपने आप मे अनमोल था। इसने प्रसन्नता और आनद का सचार किया। वर्षों के बाद मिले थे। ऐसा मिलन जिसमे सभी न एक दूसरे का ठहाके लगाकर अभिवादन किया। चौबीसो घटे साथ रहना। पुष्कर ताल पर सबका सामूहिक स्नान। देवदर्शन को साथ–साथ जाना। जलपान–गृहो पर नाश्ता करना। प्रीतिभोजो के नमूनो का भोजन सवेर–शाम लगातार तीन दिन तक। वर्षो से न सुने हुए चुटुकलो और आख्यायिकाओ का श्रवण। हसी–मजाक। इस सम्मेलन के ऐसे अनुरजनात्मक पक्ष थे जिन्होने सम्मेलन की सफलता मे चार चाद लगा दिये।

सम्मेलन समाप्त हुआ। सहभागी सक्रियता के द्वारा जीवन्त बने रहने के कर्तव्यबाध के साथ विदा हुए। मेरा कार्यालय अब शिक्षा सेवा निवृत्त अधिकारी सघ राजस्थान का कार्यालय भी बन गया। मैं महामत्री चुना गया था।

प्रवृत्ति भी निवृत्ति भी

सम्मेलन को साथियो ने खूब सराहा। एक नई शक्ति का सचार हुआ। उदयपुर के साथी वहा सबसे ज्यादा थे। वापसी यात्रा साथ-साथ हुई। घर लौटने पर भी वहीं की बाते होती। जब तब होती रहती। बातचीत को एक नया आयाम मिला। भावी कार्यक्रम सोचा जा चुका था। फिर भी कई प्रश्न थे। उनका समाधान करना था। हम मिल-जुल कर करते थे। मेरा कार्यालय वैसे ही काफी व्यस्त। पुस्तको और फाइलो से भरपूर। रख रखाव की क्रमबद्ध व्यवस्था। जब चाहे वाछित पत्र या साहित्य का मिलन ।।न हाथ का खेल।

ऐसे म मेर यहा एक नया काम शुरू हो गया। निवृत्तो का निवृतों से जुडाव का काम। कइ नय काम और भी जुडे। सम्मेलन के रेकार्ड का रखरखाव। सम्मेलन का प्रतिवेदन तैयार करना। पत्र व्यवहार करना। आवक-जावक रजिस्टर रखना। वित्त सग्रह करना। आय-व्यय का ब्यौरा रखना। कार्यकारिणी की बैठके बुलाना। उपसमितियो की बैठको की व्यवस्था करना। बैठको की सूचना निर्धारित अवधि के अनुसार प्रसारित करना। आवश्यकतानुसार अल्पकालिक सूचना पर भी बैठके बुलाना। ऐसी बैठको के पूर्व व्यक्तियो से सम्पर्क करना। सदस्यो की सुविधा की जानकारी रखना। सघ के उद्देश्यो के अनुसार कारगर कार्ययोजना की तैयारी। ऐसी तैयारी मे सदस्यो के विचारो को आमत्रित करना। सदस्यो के विचारो को क्रमबद्ध करके आलेख तैयार करना। ऐसी व्यावहारिक कार्ययोजना से सदस्यो का अवगत करना। जिला स्तर पर प्रभावशाली व्यक्तियो को खोजना। उनके सयोजक मनोनीत करना। इकाई गठित करने हेतु प्रेरित करना। उनसे सदस्यता अभियान चलवाना। सदस्यो-को-आश्वस्त-करने हेतु साहित्य भेजना। कार्ययोजना उपलब्ध करानी। सगठन के रजिस्ट्रेशन की कार्यवाही आरभ करना। दो वर्ष के बाद सम्मेलन बुलाना।

यह एक बडा काम था। एक आदमी के बस का भी नही। फिर भी सगठन खडा करने का विचार मौलिक था। स्थानीय साथी जोश से भरपूर थे। हम लोग मिले-जुल कर काम म जुट गय। कभी एक कभी दो-कभी अधिक और कभी स्थानीय सभी सदस्य इकटठे होते। मिलते। हसी-मजाक करते। काम करते। अच्छा काम होने पर अपनी कारगुजारी को आपस मे सराहते। आनद मे वृद्धि करते।

कार्य आगे बढने लगा। हमने पहला काम सघ की विज्ञप्ति तैयार करने का किया। इसको अति सक्षिप्त बनाया। इसमे सघ की स्थापना की बात लिखी। सघ के उद्देश्य अकित किये। कार्यकारिणी समिति के सदस्यो के नामो को स्थान दिया। यह भी लिखा कि सैकण्डरी स्कूल के प्रधानाध्यापक से ऊपर निदेशक के पद तक के राजकीय सेवानिवृत्त अधिकारी इसके सदस्य होगे। स्वायत्तशासी और निजी सस्थाओ के समकक्ष पदो से सेवानिवृत्त अधिकारी भी इस सघ के सदस्य बन सकेगे। निवेदन किया कि आप स्वय सघ की सदस्यता स्वीकारे। अपने साथियो को प्रेरित करे। विज्ञप्ति को मुद्रित कराया। उदयपुर शहर मे सदस्यता अभियान शुरू किया। बाहर के सदस्यो को भी ऐसा करने को निवेदन किया। मुद्रित प्रतिया राज्य के सभी जिला के सयोजको को भेजी गइ। सगठन की पहुच सारे राजस्थान मे हो गई।

हम लोग असल मे एक ही काम कर रहे थे। सारे यत्न के मूल मे एक ही समस्या थी। वह थी पूर्व पदस्तर का बन्धन। सेवानिवृत्त इसी बन्धन से ग्रसित थे। इसी से दूर-दूर थे। उन्हे इसी बन्धन से मुक्त कराना था। यह मुक्ति पदस्तर की विस्मृति से ही सभव थी। ऐसी विस्मृति बडा कठिन काम। पर मुक्ति का भी यही आधार था। तभी वे समान धरातल पर उतर सकते थ। उनकी मुक्ति इसी मे सभव थी । तभी उनका समरस होना सभव था। तभी वे एक सगठन मे जुड सकते थे। उनके वर्तमान को आनद का आगार बनाने का यही मार्ग था।

इस पक्ष पर हम खूब बाते करते। चितन करते। किसी-किसी को याद करते। हम कहते – कितने प्रयत्न से ये बडे बने थे। साहब – बने थे। कोई 'साहब कह कर सम्बोधित न करता ता इनकी भौहे चढ जाती थी। आज भी बडा होने का भ्रम पाल रखा है। उसी नशे मे जी रहे हैं। हम कैसे आदमी हैं। इन्हे नीचे खीच रहे हैं। कोरा एक 'व्यक्ति बना रहे हैं। सबकी कतार मे इनको खडा करने को यत्नशील हैं। हम इनके प्रति गुनाह कर रहे हैं या सेवा ? ऐसी बातें कर करके हम मजा लेते। काम भी करते। हम साथियो ने भी अपना भ्रम पाल रखा था। भ्रम न हो शायद यह बात सही हो – हम एक धरातल पर हैं। तभी तो समरस होकर काम करते हैं। काम सगठन का है। सभी ने अपना मान रखा है।

हम काम करते चले गये। सम्मेलन हुए छ मास गुजर गये। कार्यकारिणी के निर्देश लेने की कई बाते इकटठी हो गईं। जो कुछ किया उसका ब्योरा प्रस्तुत करने की जरूरत महसूस हुई। अजमेर मे एक बैठक करना तय किया। बैठक का स्थान रखा सघ के सयुक्त मत्री का आवास। चर्चा का प्रथम मुद्दा था जिला इकाइयो का गठन। छ मास की अवधि मे इस कार्य की प्रगति प्रस्तुत की गई। दस जिलो से जीवन्त सम्बन्ध स्थापित हो चुका था। छ मे सघ क्रियाशील हो

चुका था। शेष चार मे सयोजक नियुक्त किये जा चुके थे। उनके प्रयत्नशील होने की जानकारी प्राप्य थी। शेष को भेजे गये पत्र अनुत्तरित थे। प्रगति की प्रशसा की गई। तय रहा कि पत्र व्यवहार चलता रहे। यह सोये हुए को जगाने का काम नही है वरन उससे भी मुश्किल काम है। विस्मृति के गर्भ से लोगो को बाहर निकालना है। जीवन्त बनाना है। सक्रिय करना है। सगठित करना है। बहुत बडा काम है। लगातार सम्पर्क से बनने वाला काम है। यह प्रयत्न चलता रहना चाहिए। तभी हम कुछ न कुछ कर सकेगे।

परन्तु दूसरा मुद्दा ज्यादा महत्वपूर्ण था। शायद बहुत ज्यादा महत्वपूर्ण। हम लोग सदस्यता – अभियान चला रहे थे। नये व्यक्तियो को सघ के उद्देश्य बतलाते। समझाते। उनको हमारी बात गले नही उतरती। वे कहते – कुछ दिखाओ भी तो सही। हम कहते – आपको जीवन उपयोगी लगने लगेगा। आप शिक्षा के मामले मे जागरूक होगे। आपका आध्यात्मिक विकास होगा। आपका अनुरजन होगा। साथियो के साथ से आपकी सुरक्षा बढेगी। वे कहते – कुछ अर्थ की बात भी तो करो। हम कहते – हमने इतनी बाते जो बताई हैं वे क्या अनर्थ की हैं। उत्तर मिलता – अजी ! रुपय–पैसे प्राप्त हो कुछ ऐसी बात।

इस मुद्दे पर बैठक मे विचार हुआ। इस पर कार्यकारिणी मे दो मत थे। प्रथम मत का आधार था भारतीय सस्कृति का वानप्रस्थ जीवन। जिसमे व्यक्ति अपने अहम को घटाते–घटाते शून्य पर लाता था। फिर सन्यासी होकर निर्द्वन्द्व विचरण करता था। यह सतयुगी विचारधारा है। दूसरे मत का आधार था – सुखी जीवन का एक महत्वपूर्ण पक्ष आर्थिक है। लोगो को सगठित करना है। सगठन से जुडने मे लोगो का आर्थिक लाभ भी नजर आना चाहिए। आर्थिक लाभ की आशा– अपेक्षा दिखाना आवश्यक है। तभी लोग इससे जुडेगे। सगठन की शक्ति का एक आधार उसकी सदस्य सख्या है। आर्थिक मृग–मरीचिका को इसमे स्थान देना आवश्यक था। हम लोगो ने इस पक्ष पर चितन शुरू किया। राष्ट्रीय स्तर पर कार्यरत सस्थाओ से राज्य और जिला स्तर तक कार्यरत सस्थाओ को सूचीबद्ध किया गया। इनमे स्वायतशासी सस्थाओ को प्रधानता दी गई। खासकर वे जो पारिश्रमिक एव मानदेय देकर कार्य कराती है। इनके अलग–अलग कार्यक्षेत्र थे। परन्तु सस्था एक या अधिक कार्यक्षेत्रो मे कार्यरत थी। ये क्षेत्र थे – शिक्षण प्रशिक्षण सर्वेक्षण अनुसधान योजना–निर्माण साहित्य–सर्जन समीक्षा सस्कृति परीक्षा मूल्याकन सदर्भ–सेवा वार्ता चर्चा साहित्य–अनुवाद निरीक्षण आदि आदि। कौन सस्था क्या काम करती है इसकी हमको जानकारी थी । परन्तु कौन किस काम का है यह जानकारी नहीं थी । व्यक्ति को सस्था से जोडने के लिए यह जानना जरूरी था। अत तय किया गया कि प्रत्येक सदस्य का 'बायोडेटा' मगाया जावे। इसका प्रारूप तैयार किया गया। इसमे विशषज्ञता

को मुख्य स्थान दिया गया। इसके अनुसार सूचना मगाई जाने का निर्णय लिया गया। सूचनाओ को सकलित किया जाये। विशेष दक्षताओ के आधार पर व्यक्तियो के अलग–अलग 'पेनल्स' तैयार किये जाये। ऐसे 'पेनल्स' सम्बद्ध सस्थाओ को भेजे जाये । उनमे समाविष्ट व्यक्तियो का लाभ लेने हेतु निवेदन किया जाये। ऐसी कार्यवाही सघ का केन्द्रीय कार्यालय करे। जिला स्तर कार्यालयो को भी ऐसे कदम उठाने को प्रेरित किया जाये। बैठक मे निर्णित दोनो मुद्दो पर कार्य करना था। मेरे कार्यालय के कार्यो का विस्तार होता जा रहा था। हम लोगो ने मिलजुल कर काम करने की शैली विकसित की थी। इससे काम होता । काम भार नहीं लगता। काम आपसी मेल–मिलाप का एक जरिया था। जब–जब मिलते तो काम होता। काम करने का मजा आता। मनोरजन होता। सम्मेलन हुए आठ–नौ महीने हुए होगे। हमने उदयपुर के शिक्षा–सेवा–निवृत्त–अधिकारियो का एक 'कन्वेशन' आयोजित करना तय किया। यह उदयपुर मे ही करना था। उदयपुर की साधारण सदस्य सख्या सब से ज्यादा थी। केन्द्रीय कार्यकारिणी मे भी उदयपुर के सदस्य सबसे ज्यादा। 'कोरम' मेरी बैठक मे ही जब तब पूरा होता रहता था। हमने स्थान दिनाक और समय तय किये। कार्यकारिणी के बाहर के सदस्यो को भी निमन्त्रण भेजे। निश्चित कार्यक्रमानुसार कन्वेशन आयोजित किया गया।

हमे इसे रुचिपूर्ण बनाना था। कुछ पिछले सम्मेलन की झलकियाँ प्रस्तुत की। सदस्यता अभियान का जिक्र किया। सदस्यो को लाभकारी काम से जोडने की प्रक्रिया बताई । उनको 'बायाडेटा' भेजने का विशेष आग्रह किया। सघ के रजिस्ट्रेशन की प्रगति का ब्यौरा दिया। सघ स्थानीय इकाइयो को सक्रिय करना चाहता था। प्रथम सम्मेलन मे इस बाबत दो विद्वानो ने 'पत्र–वाचन' किये थे। उनका एक सश्लिष्ट प्रारूप तैयार किया गया था । उस प्रारूप को यहा प्रस्तुत किया गया। सदस्यो के सुझाव प्राप्त किये गये। प्रयत्न इस कार्ययोजना को व्यापक बनाने का था। व्यावहारिक बनाने का था। इतना कि प्रत्येक स्थानीय इकाई को अपने यहा अपनाने की काफी प्रवृत्तिया उसमे मिले। यह विचार सदस्यो ने बहुत पसद किया।

अब परस्पर प्रशसा एव सम्मान अभिव्यक्ति का दौर चला। 'कन्वेशन' सम्पन्न हुआ। इससे हम लोगो की हौसला–अफजाही हुई। काम करने को कुछ नई दिशाए मिली। एक दिशा तो यही कि सम्मेलन के बाद हर छठे मास एक विज्ञप्ति प्रसारित हो। जिससे लोगो की सुस्ती दूर होगी। उनमे हरकत पैदा होगी। दिशा निर्देश मिलेगे। वे अच्छा काम करने को प्रेरित होगे। अन्यथा सगठन लडखडाने लग सकता है।

हमको यह बात लग गई। हमने दूसरी विज्ञप्ति तैयार करना शुरू किया। विज्ञप्ति पाच मुद्रित पृष्ठो की थी । उस समय इसका नाम 'विज्ञप्ति' रखा था।

इसीलिए आज भी विज्ञप्ति कह रहा हू। अन्यथा यह एक अच्छा खासा 'बुलेटिन' था। इसके विस्तार मे जाने की आवश्यकता नही। पर कतिपय पक्षो का जिक्र किये बिना बात अधूरी लगेगी। इसको प्रथम सम्मेलन की अनुशसाओं पर हुई प्रगति के ब्यौरे से शुरू किया गया। फिर सघ की पजीयन सम्बन्धी कार्यवाही को अकित किया गया। इसके बाद उदयपुर–कन्वेशन का जिक्र किया गया। फिर राज्य के ग्यारह जिलो मे स्थानीय इकाइयो के गठन पर प्रकाश डाला गया। कतिपय मे समितियो के चुनाव हो चुके थे। उनके पदाधिकारियो के नाम भी अकित किये गये। सदस्यो को लाभकारी काम मे लगाने के लिए तैयार हो रहे 'पेनल्स' के मुख्य बिन्दु और प्रगति विवरण दिया गया। पठनीय सामग्री के रूप मे दो बाते इगित की गई। बोर्ड जरनल दिसम्बर 1980 मे प्रकाशित श्री एस पी शर्मा – सयुक्त मत्री का लेख – 'शिक्षा सेवा निवृत्त अब प्रवृत्त' और उनकी रचना – 'शिक्षा मे कुशिक्षा के तत्व' विज्ञप्ति मे जिला इकाइयो से अपने क्षेत्र की प्रगति का ब्योरा मागा गया था। इसके लिए एक छोटा सा प्रारूप भी उसमे शामिल किया गया। ऐसी विज्ञप्ति हर तीसरे मास प्रसारित करने की आकाक्षा भी व्यक्त की गई। विज्ञप्ति का प्रकाशन हुआ। डाक से सभी इकाइयों को रवाना कर दी गई। लगने लगा कि सगठन खड़ा होने लगा है। और फिर हम लोग दूसरे राज्य स्तरीय सम्मेलन की तैयारी मे लग गये।

इस बार का सम्मेलन आसान था। पिछला अनुभव हमारे पास था। आने वाले लोग जाने पहचाने थे। वे सघ के उद्देश्यो से परिचित थे। पिछले सम्मेलन का प्रतिवेदन भेजा जा चुका था। उसके पश्चात् दो विज्ञप्तिया प्रसारित हो चुकी थी। उनसे उनको प्रगति की जानकारी थी। इसलिए आधार पत्र बनाने मे ज्यादा सोच विचार नहीं करना पड़ा। कुछ नई बातो से उसको शुरू किया गया। ऐसी बाते जो हमारे काम की मौलिकता को उजागर करे। जिनसे सदस्यो मे उत्साह पैदा हो। वे अधिक आशा विश्वास के साथ सम्मेलन मे भाग ले सके। इस सघ के गठन के पश्चात् सहज ही हम लोग ऐसे तथ्य इकट्ठा कर रहे थे।

आधार पत्र की भूमिका मे कतिपय तथ्य अकित किये गये। भारत की सन 1981 की जनगणना से साठ वर्ष से अधिक आयुवर्ग के लोग ग्यारह प्रतिशत हैं। यह सख्या लगभग ■ करोड है। इनके कल्याण के लिए भारत मे हुआ कार्य नगण्य है। महाराष्ट्र मे सन् 1977 मे प्रथम बार एक शुरूआत हुई। वहा के डाम्बीवाली कस्बे मे 'सीनियर सिटीजन्स क्लब' का गठन हुआ। इस घटना के 3–4 वर्ष बाद दिल्ली मे 'इडिया इन्टरनेशनल सेटर' ने ऐसा ही एक कदम उठाया। इसने एक गोलमेज सम्मेलन का आयोजन किया। राजस्थान मे 'पेन्शनर समाज' है। यह सभी वर्ग के सेवानिवृत्तो का है। उनके आर्थिक अधिकारो के लिए सघर्षरत है। इसके सदस्यों की पृष्ठभूमिया अनत आयामी है। उनके पदो के स्तर भी अनेक प्रकार के

हैं। परन्तु एक व्यवसाय के लोगो का मिलना अपने आपमे महत्वपूर्ण है। उनके कल्याण के लिए उनके ही कार्यक्षेत्रो से अवसरो को जुटाना अपने आपमे मौलिक है। इतना ही तो पर्याप्त नही है। इसके अलावा और भी तो कई काम हैं जिनको अब तक छुआ नही गया है। वे इस सघ के कार्य क्षेत्र मे आते हैं। उनको हाथ मे लेना आवश्यक है। इससे अन्य सेवाओ के सेवानिवृत्तो को भी प्रेरणा मिलेगी। हम लोग कोइ अच्छा उदाहरण प्रस्तुत कर सकेगे। अत सम्मेलन मे आपकी उपस्थिति आवश्यक है। अनिवार्य है।

इसके पश्चात् सम्मेलन मे करणीय कार्यों पर प्रकाश डाला गया। सम्मेलन स्थल अवधि एव समय–सारिणी को स्थान दिया गया। निमत्रण पत्र डाक से रवाना कर दिया गया। सम्मेलन पुष्कर मे ही हुआ। स्थान अवश्य बदला। इस बार हायर सैकण्डरी स्कूल के 'हाल मे यह सम्पन्न हुआ। दो वर्ष पूर्व यह जून मास मे किया गया था। इस बार भी वही महीना। पहले तीसरा सप्ताह ही था इस बार दूसरा सप्ताह। जून मास मे स्कूल भवन खाली–खाली। सुनसान। सम्मेलनो के लिए सहज सुलभ। वहा के दृश्य–दर्शनस्थल सैलानियो से भरपूर। सारे देश के सैलानियो की आवाजाही। युवक–युवतियो की बहुरगी पोशाको से आकर्षक। मदिर आश्रम व पुण्यस्थल दर्शनार्थी बुजुर्गो से खचा खच भरे हुए। अपने आप ही जहा आनद का स्रोत बहता रहे। ऐसे अवसर पर हमारा सम्मेलन आयोजित हुआ।

यह सम्मेलन प्रथम द्वितीय और तृतीय दिवस पूर्वाह्न तक पुष्कर मे ही आयोजित हुआ। तृतीय दिवस अपराह्न सत्र माध्यमिक शिक्षा बोर्ड अजमेर मे सम्पादित हुआ। बोर्ड–अध्यक्ष ने आमन्त्रित किया था।

भारत मे कोई भी चिंतन हो। उसको अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य मे देखे बिना वह अधूरा रहता है। इस अधूरेपन को भरने का प्रयास यहा भी इस सम्मेलन मे भी हुआ। इसमे मुख्य भूमिका एक वरिष्ठ सदस्य ने निभाई। उन्होने बताया कि अमरीका मे सेवानिवृत्तो का एक आन्दोलन चल रहा है। नाम है – रिंकल्ड रेडिकल मूवमेंट । इसका हिन्दी रूपान्तरण है 'झुर्रीदारो का मूलभूत आन्दोलन'। इसको एक महिला मारग्रेट कहू सचालित कर रही है। आयु सम्बन्धी भेदभाव के विरुद्ध यह आन्दोलन है। इसका उद्देश्य है एक नई स्थिति लाना। ऐसी स्थिति जिसमे काम कर सकने योग्य व्यक्तियो को काम पर लगाये रखना। तब तक जब तक वे काम करने योग्य हो। उन्होने रूस का उदाहरण दिया। वहा की काम देने की गारटी का जिक्र किया। उन व्यक्तियो को भी जो सेवानिवृत्ति के पश्चात् भी काम करने को सक्षम हो। इसी क्रम मे जापान का जिक्र हुआ। वहा पर वृद्धो के लिए विश्वविद्यालय खोले गये। उनका उद्देश्य वृद्धो का पुनर्वासन है। इन सम्मेलन

ने वर्ष (1982) को ही विश्व स्वास्थ्य संगठन ने वृद्धों का वर्ष घोषित किया था। हमारे सम्मेलन से कुछ समय पूर्व संस्था ने भी एक पहल की थी। सवाई मानसिंह मेडिकल कालेज जयपुर से एक सम्पर्क किया। इसमे वृद्धो के स्वास्थ्य सुधार की सुविधाओ व ऐसे ही अन्य कार्यक्रम को स्थान दिया गया। पूरे एक सप्ताह का कार्यक्रम चला था।

इस चर्चा के चलते 'नौकरी और काम' पर बातचीत शुरू हो गई। सवाल था – 'काम के लिए नौकर है या नौकर के लिए काम ? प्रथम मे 'काम' महत्वपूर्ण है। दूसरे मे 'नौकर' महत्वपूर्ण है। कोई किसी एक नजरिये से देखता है। दूसरा कोई किसी दूसरे नजरिये से देखता है। एक वर्ग मानता है – नौकरिया बढाने मे हमारी सुरक्षा है । नौकर बढ रहे हैं। काम घट रहा है। नौकर नौकरी देने वाले का सगा बनता है। काम का सगा नही। आदमी से जब राजनीति जुडती है तो आदमी महत्वपूर्ण बनता है। काम से जब आदमी जुडता है तो काम महत्वपूर्ण बनता है। प्रथम विकल्प से नियोक्ता सबल होता है। दूसरे से राष्ट्रीय उत्पादन बढता है। कौन किस की फिक्र पहले करता है इस पर राष्ट्र का भविष्य निर्भर करता है। सत्ता से बाहर रहते राष्ट्रनीति और राष्ट्रहित की बात याद रहती है। सत्ता मे आते ही उन्ही लोगो की भाषा बदलने लगती है। स्थान बदलने से भाषा का बदलना रुकना चाहिए। कौन रोके ? कैसे रोके ? यह तो बाद की बात है । पहले 'लोकशक्ति जागरण' होना चाहिए। इस जागरण मे शिक्षा–सेवानिवृत्तो की भी भूमिका होनी चाहिए। ऐसे ही कई दिलचस्प प्रकरणो पर चर्चाए हुईं। कतिपय निर्णय लिए गये। अनुशसाए की गईं।

प्रसगवश एक आयाम और भी। सहभागियो मे कोई जल्दी सवेरे सध्या–पूजा करता। कोई देर रात एकात मे बैठकर उपासना करता। कोई अपने बिछौने मे बैठा–बैठा ही कुछ गुन–गुनाता। कोई हाथ मे माला लेकर मन्त्र–जाप करता। कोई जाप करता और अपनी अगुलियो पर ही गणना करता। कुछ ऐसे भी थे जो कुछ न करते। ये जब तब कहते – इन सतो की ज्ञान की पुटलिया खुलवानी है। प्रत्येक की पुटलियो मे क्या है ? कैसे है ? कहा से लाया है ? क्या अनुभव हैं ? कहाँ तक पहुँचा है ? किसकी आस लगा रखी है ? क्या मिलेगा ? क्या होगा ?

ये प्रश्न चुहुलबाजी का ही अग थे। पर थे महत्वपूर्ण । इन पर अनौपचारिक चर्चा होती। यह चर्चा गमीर रूप भी ले लेती। सब मानते कि अध्यात्म की बाते बहुत होती हैं। हर कोई आध्यात्मिक है। पर है अपने–अपने तरीके से। होने दीजिये। उसे रोकता कौन है ? पर उसका कोई अर्थ तो होगा। उसकी काई वर्णमाला तो होगी। इन प्रश्नो पर भी सम्मेलन मे सारगर्भित चर्चाए होती।

सहभागियो मे एक धर्मध्यान मे ज्यादा रुचिशील थे। हम सभी उनके पीछे पड गये। हमने कहा — गुरु ! आज तो हमको भी कुछ 'ज्ञान' दीजिये। ज्ञान न सही ज्ञान का 'गुर' ही सही। पर बताना तो पडेगा। वे बोले — यह मामला गभीर है। चुहुलबाजी का नही। जिज्ञासु की तरह बैठने को तैयार हो ? अगर हा तो मै बताता हूँ। हम सबने कहा — हाँ जरूर।

उन्होने बताया कि ससार मे एक परमतत्व है। उसीको 'परमात्मा' कहते हैं। यही परमात्मा जब शरीर की सीमा मे आता है तो आत्मा कहलाता है। इसी आत्मा को जब यह भ्रम पैदा होता है कि मैं शरीर हूँ तो उसे 'जीवात्मा कहते हैं। सक्षेप मे परमतत्व का समस्टिरूप परमात्मा है। उसी का व्यष्टिरूप आत्मा है। आत्मा का जीवभाव उसको जीवात्मा बना देता है।

अध्यात्म का बार–बार जिक्र होता है। परन्तु यह है क्या ? इसका उत्तर देना आसान न हो फिर भी इसकी एक वर्णमाला है। उसको हम आध्यात्मिक वर्णमाला कह सकते हैं। आध्यात्मिक का अर्थ है आत्मा–सम्बन्धी। जीवधारी की सक्रियता का आधार उसकी आत्मा' है। आत्मा को कई जगह अन्त करण' भी कहते हैं। अन्त करण ही स्मरण विकल्प निश्चय सुख–दु ख का अनुभव करता है। अन्त करण की चार वृत्तियॉ स्वीकारी गई हैं। वे है — मन बुद्धि अहम् और चित्त। हमने आज तक जो कुछ देखा सुना और किया उसका लेखा मन' के पास है। वह जन्मातर से साथ है। वही इच्छाओ का उद्गम स्थल है। उसी मे इच्छा की प्रतीति होती है। इसको 'सकल्प कहते है। सकल्प की विरोधी या समानान्तर इच्छा की प्रतीति विकल्प कही जाती है। मन म सकल्प–विकल्प पैदा होते रहते हैं । कोई सकल्प हो या विकल्प हो उसकी क्रियान्विति यकायक नही होती। उसकी परख 'बुद्धि करती है। बुद्धि जन्मातर की साधना का फल है। यह स्वाध्याय–सत्सग के द्वारा शुद्ध होती है। सामान्य बुद्धि तोलती है कि सकल्प के अनुसार कार्य करने मे लाभ है या विकल्प के अनुसार। जैसा बुद्धि का स्तर वैसा उसका निर्णय। क्षुद्र बुद्धि लालची होती है। वह नीचे से नीचा स्तर अपना कर लाभ उठाने को ललचाती है। शुद्ध बुद्धि व्यापक लाभ की ओर प्रवृत्त करती है। बुद्धि के निर्णय की एक परख और होती है। इसमे व्यक्ति के अहम् की भूमिका मुख्य होती है। अहभाव किसी निर्णय को ऊँच–नीच की दृष्टि से देखता है। यह भी स्वार्थपरक होता है। अहम् से अर्थ है मैं । किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व की यह सबसे सशक्त वृत्ति है । 'बुद्धि के निर्णय का व्यक्ति के अहम् की दृष्टि से तालमेल आवश्यक है। अगर तालमेल है तो उस अनुरूप कार्य की शुरूआत होगी। अन्यथा विचाराधीन सकल्प विलीन हो जायेगा। सकल्प उठना उसकी परख क्रियान्विति या विलीनीकरण लगातार चलते हैं। समक्षणिकता से चलते हैं। श्रेष्ठ सकल्प शुद्ध बुद्धि और निस्पृह अहम् से सम्पादित काय श्रेयस कार्यों की परिधि मे आते

है। इनके अन्तर्विरोध पर स्वार्थपरक कार्य सम्पादित होते हैं। ये प्रेयस् कार्यों की परिधि मे आते हैं। श्रेयस्कर कार्य यशकीर्ति का अर्जन करते हैं। यह सारी प्रक्रिया चित्त पर प्रतिबिम्बित होती है। चित्त को एक ऐसा दर्पण समझना चाहिए जिसमे सूर्य का प्रकाश पड रहा हो और अन्य विषयो का प्रतिबिम्ब आ रहा हो। 'चित्त' भी मूलत वासनाओ–इच्छाओ से चित्रित है। इस प्रकार चित्त से ही सब व्यवहार चलते हैं। उसीमे सब वासनाए रहती हैं। परन्तु इन सब का प्रारभ 'मन' से होता है। मन के लिए कहा जाता है कि वही बन्धन और मुक्ति का कारण है। तात्पर्य यह है 'मन' जीवात्मा के भीतर ब्रह्म को और बाहर इन्द्रियो के मार्ग से देखता है। इन्द्रिया मन को अपने विषयो की ओर ले चलती हैं। मन बडे वेग से इन्द्रियो के विषयो का जीवात्मा को बोध करता है। इससे आत्मा की वृत्ति बडे वेग से चलती है। यही वृत्ति बन्धन का कारण है। जब मन थक जाता है तो परमात्मा के नियमानुकूल यह भीतर की ओर काम करने लगता है। उस समय उसका इन्द्रियो से सम्बन्ध कट जाता है। इससे 'मन' का काम रुक जाता है। तब उसका ब्रह्म से सम्बन्ध होता है। इस स्थिति मे उसको आनद मिलता है। यह स्थिति मुक्ति का कारण है। जब मन की थकावट ब्रह्म के आनद से दूर हो जाती है तब मन फिर से क्रियाशील होता है। मन के साथ ही उसकी बुद्धि और अहम् क्रियाशील होते हैं। इससे वह दु ख–सुख का अनुभव करने लगता है। एसी अदल–बदल स्थिति का अहसास रहना। इस पर नियन्त्रण का अभ्यास साधना की शुरुआत है। 'मन' को अपनी पसद की सर्जनात्मक प्रवृत्ति मे लगाए रखना। इस प्रकार लगाए रखना कि दूसरा विचार न आये। यह एकाग्रता है। सत कबीर रैदास नामदेव सजना कसाई और पीपाजी ऐसी ही सर्जनात्मक प्रवृत्ति मे लगे रहते थे। इससे उनके मन की एकाग्रता बनी रहती थी। यह बाह्य विषय पर केन्द्रित एकाग्रता है। इसका लगातार अभ्यास वास्तविक स्वरूप की ओर बढने मे सहायक होता है। इस एकाग्रता को भी समेट लेना वृत्ति–निरोध है। इस स्थिति के आने पर 'मन' के जड तत्व से सयोग का नाश हो जाता है। उसका सयोग आतरिक चेतन तत्त्व से होता है।

दु ख–सुख के अनुभव से मुदि [illegible] मार्ग है [illegible] ।
करके ब्रह्म की शरण मे ले जाना। व [illegible] का [illegible] ।
जाता है। मात्र 'ब्रह्म' ही बच रहता ह [illegible]
अनुभव होने लगता है। इस अनुभव का [illegible]
है। परन्तु 'मन' [illegible] समाप्त [illegible] ।
जिससे उसकी [illegible]
की शरण मे [illegible]
'सिद्धि' है।

अपने स्वय के प्रयत्न के द्वारा मन को शात बुद्धि को शुद्ध अहम् को निस्पृह और चित्त को वासना रहित बना कर की गई अन्तर्यात्रा ब्रह्मानद की प्राप्ति का मार्ग है। इस मार्ग पर चलने का अभ्यास जीवात्मा की वह पूजी है जो शरीर को छोडने के पश्चात् भी साथ जाती है।

ऐसी पूजी को प्राप्त करना सेवानिवृत्त जीवन का सबसे ऊँचा उद्देश्य है।

बात समाप्त हुई। सबने प्रवचन को खूब सराहा।

अब तो जब तब चर्चा होती। साधक सभागी अपने और अन्यो के अनुभव सुनते–सुनाते। कुछ ध्यान से सुनते। कोई–कोई बीच मे तुक्के मारता। कोई मजाक उड़ाता।

फिर भी इस सब–कुछ ने वहा के वातावरण मे आध्यात्मिकता की एक विशेष छाप छोड दी। वह भी ऐसे सम्मेलनो का एक आवश्यक अग था।

सम्मेलन–अवधि समाप्त हुई।

इसी पृष्ठभूमि मे दो वर्ष के पश्चात हमने तीसरा सम्मेलन भी कर डाला। हर बार सहभागियो मे नवीन उत्साह का सचार होता। हम लोग कुछ नये काम लेकर घर लौटते। सम्मेलन की अनुशसाओ को सम्बन्धित स्थानो को भेजना। पत्र व्यवहार करना। अनुत्तरित पत्रो के लिए स्मरण–पत्र भेजना। जिला–इकाइयो को प्रेरणा प्रोत्साहन देना। जहा लोग चुप थे उनकी चुप्पी तोडना। उनको हरकत मे लाना। जिला सगठन खडा करने के लिए राजी करना आदि आदि। ये सारे काम यहा महामत्री–कार्यालय का था। इसको हम सब स्थानीय साथी मिलजुल कर करते। कार्य को करने का व्यवस्थित रूप मे करने का कुशलता से करने का और उसकी पूर्णता का हम लोग आनद लेते।

सम्मेलन हर दो साल बाद होता था। विधान मे प्रावधान था। चौथा सम्मेलन होना था। पिछले सम्मेलनो मे मेरी नगरी से हर बार चार साथी गये थे। अजमेर नगर से 3–4 साथी पुष्कर आते। शेष राजस्थान से मात्र तीन सदस्य इकटठे होते। आसपास के शिक्षक–वर्ग को जुटाने पर सम्मेलन जैसा माहोल बनता था। इस उपस्थिति–सख्या ने हमको लगातार निराश किया। सम्मेलन तो हम कहते थे। सारे राजस्थान मे न्योते भेजते। पर एकत्रित होते मात्र 10–12 सदस्य। इन इतने से लोगो के लिए इतनी बडी मशक्कत !

राज्य व्यापी कागजी सगठन तो खडा हो गया। आखिर छ वर्ष तक साधना की थी। पर उसमे प्राणप्रतिष्ठा का चमत्कार न हो सका। जिदादिल साथियो ने निर्जीव सस्था को ढोने से इन्कार कर दिया। और फिर बस।

जीवन्त साथी अब भी जिला–इकाइया चला रहे हैं।

वे चलेगी। चलती रहेगी।

हैं। इनके अन्तर्विरोध पर स्वार्थपरक कार्य सम्पादित होते हैं। ये प्रेयस् कार्यों की परिधि मे आते हैं। श्रेयस्कर कार्य यशकीर्ति का अर्जन करते हैं। यह सारी प्रक्रिया चित्त पर प्रतिबिम्बित होती है। चित्त को एक ऐसा दर्पण समझना चाहिए जिसमे सूर्य का प्रकाश पड रहा हो और अन्य विषयो का प्रतिबिम्ब आ रहा हो। 'चित्त' भी मूलत वासनाओ–इच्छाओ से चित्रित है। इस प्रकार चित्त से ही सब व्यवहार चलते हैं। उसीमे सब वासनाए रहती हैं। परन्तु इन सब का प्रारभ 'मन' से होता है। मन के लिए कहा जाता है कि यही बन्धन और मुक्ति का कारण है। तात्पर्य यह है 'मन' जीवात्मा के भीतर ब्रह्म को और बाहर इन्द्रियो के मार्ग से देखता है। इन्द्रिया मन को अपने विषयो की ओर ले चलती हैं। मन बडे वेग से इन्द्रियो के विषयो का जीवात्मा को बोध करता है। इससे आत्मा की वृत्ति बडे वगे से चलती है। यही वृत्ति बन्धन का कारण है। जब मन थक जाता है तो परमात्मा के नियमानुकूल वह भीतर की ओर काम करने लगता है। उस समय उसका इन्द्रियो से सम्बन्ध छूट जाता है। इससे 'मन' का काम रुक जाता है। तब उसका ब्रह्म से सम्बन्ध होता है। इस स्थिति मे उसको आनद मिलता है। यह स्थिति मुक्ति का कारण है। जब मन की थकावट ब्रह्म के आनद से दूर हो जाती है तब मन फिर से क्रियाशील होता है। मन के साथ ही उसकी बुद्धि और अहम् क्रियाशील होते हैं। इससे वह दु ख–सुख का अनुभव करने लगता है। ऐसी अदल–बदल स्थिति का अहसास रहना। इस पर नियन्त्रण का अभ्यास साधना की शुरूआत है। 'मन' को अपनी पसद की सर्जनात्मक प्रवृत्ति मे लगाए रखना। इस प्रकार लगा रखना कि दूसरा विचार न आये। यह एकाग्रता है। सत कबीर रैदास नाम सजना कसाई और पीपाजी ऐसी ही सर्जनात्मक प्रवृत्ति मे लगे रहते थे। उनके मन की एकाग्रता बनी रहती थी। यह बाह्य विषय पर केन्द्रित एकाग्र इसका लगातार अभ्यास वास्तविक स्वरूप की ओर बढने मे सहायक हो इस एकाग्रता को भी समेट लेना वृत्ति–निरोध है। इस स्थिति के आने के जड तत्व स सयोग का नाश हो जाता है। उसका सयोग आतरिक से होता है।

दु ख–सुख के अनुभव से मुक्ति का एक ही मार्ग है 'मन' द करके ब्रह्म की शरण मे ले जाना। वहाँ पहुँचने पर मन का अस्तित्व जाता है। मात्र 'ब्रह्म' ही बच रहता है। इस स्थिति मे व्यक्ति को अनुभव होने लगता है। इस अनुभव को स्थायित्व देना ही अध्यात्म है। परन्तु 'मन' इस स्थिति को समाप्त करने को छटपटाता है। बा जिससे उसकी सत्ता कायम रहे। साधक बार–बार उसको अन्तर्मुख की शरण मे स्थापित करन का लगातार यत्न करता है। इस यत्न मे 'सिद्धि' है।

चाहिए। सरकार का दरख्वास्त देने गया था। दे आया। शुल्क भी जमा करा आया। कालेज खोलने की स्वीकृति तो मिलेगी । परन्तु यह परिषद् तब हमारी क्या मदद करेगी ?

मैंने तब तपाक से उत्तर दिया था – आपका कालेज खुलवा आयेंगे। सम्मेलन समाप्त हुआ। सब विदा हुए।

बरस पर बरस बीतते गये। बाद मे दो सम्मेलन भी हुए। आदिलोक का कोई प्रतिनिधि नहीं न वे न कोई और। न कालेज के प्रकरण की कोई सूचना। न कोई बात। मै पूरी तरह भूल चुका था।

तीसरा सम्मेलन हुआ। उसके बाद प्रतिवेदन लिखा। टंकित और चक्रांकित कराया। पोस्ट करके घर आया। यह काम भी पूरा हुआ। इसकी खुशी थी। मै सुस्ता रहा था। तभी दरवाजे की घंटी बजी। मैं दरवाजे पर पहुचा। दरवाजा खोला। सामने वही व्यक्ति। आदिलोक का प्रतिनिधि। मेरे लिए अप्रत्याशित अतिथि। मैंने कहा – आइये। वे आये। मेरे कार्यालय मे एक कुर्सी पर इत्मीनान से बैठ गये। पखा चल रहा था। बाहर से आये थे – मैंने मटकी से गिलास भरा। सामने कर दिया। वे गटागट पी गये। मैंने पूछा और ? उन्होने कहा – हा ! बाहर बहुत गर्मी है। मैने दूसरा गिलास पिलाया। उन्होने पीकर कहा बस। अब मैंने भीतर सूचना दी चाय–नाश्ते के लिए।

– वे बोले – आपने हमारे बी.एड कालेज की विज्ञप्ति देखी ! मैंने अचम्भे से पूछा – क्या कालेज मिल गया ? मैंने तो विज्ञप्ति नहीं देखी।

– मिल गया न। एक यूनिट साठ का मिला है। राजस्थान पत्रिका के बारह सितम्बर (1984) के अक मे विज्ञप्ति निकाल दी। चोबीस तक प्रवेश होगे। फिर कालेज शुरू।

– गुरुदेव ! आपको बधाई ।

– कोरी बधाई नही। आपको चलना है।

– मैं क्यो चलू ? मैं निवृत्त हो गया सो हो गया। अब नौकरी नही करता।

– नौकरी का किसने कहा ? यह तो सेवा है। परिषद् की संहिता मेरे पास भी है। आपने भी कबूला है कि किसी सदस्य के द्वारा अपने हाथ मे ली गई योजना मे अन्य सदस्य अपनी विशेष योग्यता का लाभ पहुँचायेंगे। आपने प्रथम सम्मेलन मे वादा किया था।

– किस अवसर पर क्या वादा ?

7

आदिलोक में

पुष्कर मे हम लोग प्रथम बार मिले थे। प्रथम सम्मेलन का अवसर था। सम्मेलन की पूर्व सध्या हम सस्कत कालेज पहुँचे। सम्मेलन वही होना था। बहुत बडा भवन था। नया–नया बना था। दूसरी मजिल हमे मिली। यहाँ चारो ओर बरामदे थे। पीछे कमरे। कमरो के दरवाजे बरामदे मे खुलते थे। भवन के पिछले भाग मे एक बडा कमरा। इसका हमने अपना आवास बनाया। बाहर बरामदा। बरामदे के एक ओर प्रवेश द्वार था। इसको भीतर से बन्द करने पर अपना एक ससार बन गया। सेवानिवृत्तो का ससार अभूतपूर्व ससार। रात्रि विश्राम के पूर्व हमने बरामदे का दरवाजा भीतर से बन्द कर दिया। फिर देर रात तक चुहुलबाजी करते रहे। हँसते–हँसते आतो मे बल पड गये। सो गये।

दूसरे दिन सवेरे साथी देपुरा ने बरामदे का दरवाजा खोला। खोलते ही उन्होने कुछ देखा। व वापस कमरे मे आये। बोले – कोई बेचारा देर रात आया होगा। कही जगह नही मिली दिखती है। दरवाजे के बाहर सोया खराटे ले रहा है। बिछौना नजर नही आता। सिर तक धोती ओढ रखी है। हम मे से एक–एक दो–दो जाते देखते भीतर आ जाते। किसी ने कहा – सोने दो यार ! बेचारा जगेगा चला जायेगा।

परन्तु हुआ उल्टा। वह आदमी भीतर आया। हमने उसको पहचाना। मैंने पूछा – आप बाहर सो रहे थे ! उत्तर मिला – हाँ ! जयपुर साइड से आया हूँ। बहुत देर से पहुँचा था। कुन्दी भीतर से बन्द थी। मैंने सोचा – क्यो सताऊँ ! गर्मी का मोसम है। बाहर ही सो जाऊँ । सो गया। बडी बढिया नीद आई । अभी–अभी जगा। भीतर चला आया।

वाह गुरु ! खूब आये। देखो भाई ये आदिलाक से आय हैं। तीन वेद के ज्ञाता हैं। शिक्षा की सबसे ऊँची उपाधि इनके पास है। आलेख तैयार करने मे माहिर हैं। सबै भूमि गोपाल की रटते रटते तुम सबकी जबान घिस गई। किसी ने करके नही दिखाया। इन्होने करके दिखा दिया। मान गये हमतो। आपका स्वागत – हमारे अध्यक्ष महोदय ने कहा।

ये नव–आगतुक भी हमारे साथ हो गये। प्रथम सम्मेलन मे आलेख बनाने मे उनकी खास भागीदारी रही। तभी एक दिन उन्होने कहा और पूछा भी – हमारे यहाँ एक सस्था है। उसमे बी.एड कालेज खोलना है। अनापत्ति प्रमाण पत्र

चाहिए। सरकार का दरख्वास्त देने गया था। दे आया। शुल्क भी जमा करा आया। कालेज खोलने की स्वीकृति तो मिलेगी । परन्तु यह परिषद् तब हमारी क्या मदद करेगी ?

मैने तब तपाक से उत्तर दिया था — आपका कालेज खुलवा आयेगे। सम्मेलन समाप्त हुआ। सब बिदा हुए।

बरस पर बरस बीतते गये। बाद मे दो सम्मेलन भी हुए। आदिलोक का कोई प्रतिनिधि नहीं न वे न कोई और। न कालेज के प्रकरण की कोई सूचना। न कोई बात। में पूरी तरह भूल चुका था।

तीसरा सम्मेलन हुआ। उसके बाद प्रतिवेदन लिखा। टकित और चक्राकित कराया। पोस्ट करके घर आया। यह काम भी पूरा हुआ। इसकी खुशी थी। मै सुस्ता रहा था। तभी दरवाजे की घटी बजी। मैं दरवाजे पर पहुचा। दरवाजा खोला। सामने वही व्यक्ति। आदिलोक का प्रतिनिधि। मेरे लिए अप्रत्याशित अतिथि। मैंने कहा — आइये। वे आये। मेरे कार्यालय मे एक कुर्सी पर इत्मीनान से बैठ गये। पखा चल रहा था। बाहर से आये थे — मैंने मटकी से गिलास भरा। सामने कर दिया। वे गटागट पी गये। मैंने पूछा और ? उन्होने कहा — हा ! बाहर बहुत गर्मी है। मैंने दूसरा गिलास पिलाया। उन्होने पीकर कहा बस। अब मैंने भीतर सूचना दी चाय–नाश्ते के लिए।

— वे बोले — आपने हमारे बी.एड कालेज की विज्ञप्ति देखी ! मैंने अचम्भे से पूछा — क्या कालेज मिल गया ? मैने तो विज्ञप्ति नहीं देखी।

— मिल गया न। एक यूनिट साठ का मिला है। राजस्थान पत्रिका के बारह सितम्बर (1984) के अक मे विज्ञप्ति निकाल दी। चौबीस तक प्रवेश होगे। फिर कालेज शुरू।

— गुरुदेव ! आपको बधाई ।

— कोरी बधाई नही। आपको चलना है।

— मै क्यो चलू ? मैं निवृत्त हो गया सो हो गया। अब नौकरी नही करता।

— नौकरी का किसने कहा ? यह तो सेवा है। परिषद् की सहिता मेरे पास भी है। आपने भी कबूला है कि किसी सदस्य के द्वारा अपने हाथ मे ली गई योजना मे अन्य सदस्य अपनी विशेष योग्यता का लाभ पहुँचायेगे। आपने प्रथम सम्मेलन मे वादा किया था।

— किस अवसर पर क्या वादा ?

तभी भीतर से चाय–नाश्ते की ट्रे आ गई। मैने नाश्ते की प्लेट उनको आगे बढ़ा दी। हम नाश्ता करने लगे। चाय की प्याली उन्होने खुद ही पकड़ ली। चाय–नाश्ता शुरू हो गया। थोडी देर हम चुप रहे। मैने प्रश्न तो कर दिया था। पर मै जान रहा था कि गलती मेरी थी। मुझे ऐसा वादा नहीं करना था। नौकरी करता तो अब तक काफी कुछ कर लेता। और कुछ नही तो पैसा तो कमा ही लेता। पर मन स्वतन्त्र रहना तय किया। पाच–छ साल मे मैंने अपना जीवन इसी तन्त्र मे ढाल लिया। आज यह व्यक्ति सामने है। एक ओर वादे से मुकरने की स्थिति दूसरी ओर अपने निर्णय के डिगने की बात। मैं असमजस मे पड गया। मैने स्वय से कहा – तूने जो अब तक नौकरी के न्योते नहीं माने ये तो उनके थे जिनसे तेरा वादा नही था। तू 'ना' कर सकता था। परन्तु यह तो वो न्योता है जिसके लिए तू कभी का वादा कर चुका है। तू कह चुका – आपका कालेज खुलवा आयेंगे। तू बच कर कहा जा सकता है ? मैं फस गया। मैंने अपने आप से पूछा – आचार सहिता तो बाद मे बनी उसके पहले ही तू वादा कर चुका। आचार सहिता म विकसित 'दर्शन' यही तो है कि सेवानिवृत्त सेवानिवृत्तो की मदद करेगा। वादा मेरा आचार सहिता हमारी सबकी मेरे अतर से निर्णय हुआ – जाना तो होगा।

चाय की चुप्पी उन्होने तोडी ।

– वे कहने लगे – मैं सम्मेलन में यह विश्वास लेकर आया था कि कालेज खोलने मे यहाँ से मदद मिलेगी। आपने वादा किया था।

– मने हारे हुए की तरह कहा – हाँ जी ! कहा भी था। तब मैने सोचा था – 'कब मरेगी सासू–कब आयेगे आसू'। आप तो 'सास' के मरने की आखिरी खबर लेकर चले आये। बीच मे हारी–बीमारी की खबर देते तो हमारा भी मानस बना हुआ मिलता।

– वे बोले – हमारे यहा तो चिटठी लिखते ही नही। लिखे तो कई–कई दिनो से ठिकाने पहुँचती है। कभी आप पत्र लिखना। साथ–साथ तार भी मुझे भेजना। दोनो साथ–साथ मिलेगे। इस लिए कोई जरुरी काम हो तो मैं खुद ही चला जाता हू।

– मैने कहा – स्वीकृति वगैरा के कागजात तो दिखाइये ?

– वे तो नही हैं।

– तब फिर क्या लेकर आये ?

– यह सदेश लेकर आया हू कि प्रिंसिपल आप बनेगे। आप पात्र है। आपको ऐसे कालेज का अनुभव है।

— मैने कहा — ऐसा नही हो सकता। रोना धोना पुरोहित जी के घर। आप भी पात्र हैं। आपका मेनेजमेन्ट आप वहाँ के स्थाई निवासी मेरी ओर से आप प्रिंसिपल। एक शर्त के साथ कि आप जो पैसा लेंगे उससे मैं एक पैसा भी कम नहीं लूँगा। रहने की सारी व्यवस्था आपकी।

— उन्होने उत्तर दिया — हाँ ! इसमे कोई हर्ज नहीं है। अब बताइये कब चलेंगे ?

— मैंने कहा — ऐसे कैसे चले ? गुरुजी ! आजकल बी.एड कालेज मे क्या होता है किस स्तर का होता है कैसे होता है किन साधनो से होता है कितने नमूने के व्याख्याताओ से होता है कैसी—कैसी भौतिक सुविधाओ मे होता है ये और इनके अलावा भी बहुत कुछ जाने बिना मैं कैसे आ सकता हूँ ? एक बात और। यहाँ एक सेवानिवृत्त साथी और हैं। पहले उनके यहाँ चले। आप उनको भी ले चलें।

— उन्होने कहा — हाँ ! उनसे भी मिलना है। मैं तो भूल ही गया था। चलो उनसे मिलें।

हम दोनो उनके आवास पर गये। वे मिल गये। तैयार भी हो गये। बराबरी का पारिश्रमिक तय हुआ। तैयारी के साथ जाना था। जितना जानकर जाने की बात मैंने गुरुजी से कही थी उतना जानने के बाद जाने के समय का अन्दाजा लगाया। पचाग देखा। चार—पाच दिन बाद एक अच्छा मुहूर्त था। सर्वार्थसिद्धि योग था उस दिन। उस दिना जाना तय रहा। गुरुजी को आग्रह करके उन मित्र ने अपने यहाँ रोक लिया। वे रुक गये। उन्होने कहा — मेरा काम हो गया। अब मैं चला जाऊँगा। मैंने सहमति दी। मैं चला आया। मैं कालेज खुलवा आने की उधेड़—बुन मे लग गया।

उदयपुर मे तब चार कालेज थे। एक—एक दिन एक—एक कालेज मे जाता। जानकारी हासिल करता। जो मिलता इकटठा करता जाता। बी.एड पाठयक्रम आशार्थियो का चयन—मानदण्ड प्रशिक्षणार्थियो के अध्ययनार्थ पुस्तके सदर्भ साहित्य पाठ—योजना—प्रारूप पाठ—परिवीक्षण—प्रारूप क्रियात्मक पाठो की मूल्याकन—विधि सत्रीय कार्य की रूप—रेखा क्रियात्मक और सैद्धान्तिक परीक्षाओ में अक विभाजन दृश्य—श्रव्य सामग्री—सूची सत्रीय कार्य—केलेण्डर पाठ—योजना और सेशनल वर्क— के नमूने यूनिट—प्लान्स के नमूने यहाँ तक कि एक कालेज मे कुल जितने विषय की फाइले सधारित होती हैं उनकी सूची। यह भी कि खरीदने और मुद्रित कराने मे कौन—कौन सी कम्पनी या दूकान से सम्पर्क करके अच्छी और सस्ती खरीद हो सकती है। एक सूची मैंने उदयपुर के उन पात्र आशार्थियो की पते सहित भी तैयार करली जो व्याख्याता के पद के लिए सहज उपलब्ध हो सकते थे।

अब मैं तैयार था। मेरे मित्र भी तैयार थे। निश्चित दिनांक को बस से हम रवाना हुए। सवेरे का समय था। गर्मी का मौसम था। हमारे मित्र आगे की सीट पर थे। मैं पीछे की सीट पर उनके ठीक पीछे बैठा था। सेवानिवृत्ति के [illegible] वर्ष बाद यह पहली सामाजिक यात्रा थी। घरेलू जीवन में हम दोनों रम गये थे। प्रत्येक ने अपनी शैली से जीने का सरंजाम कर लिया था। एक निश्चित दिनचर्या बन चुकी थी। मैंने अपने इष्टदेव से सीधा सम्बन्ध बना लिया था। इस सम्बन्ध के बीच में कभी तकरार हुआ करती थी। वह कभी की हट चुकी थी। आज फिर एक छोटी तकरार सामने थी। पिछला किया कराया गडबड नजर आ रहा था। मैं इन विचारों में खोया यात्रा कर रहा था। तभी मेरे पास बैठे एक यात्री ने मुझे कोहनी से सचेत करके कहा -- क्यों ! तबियत तो ठीक है आपकी ! मैंने कहा-- हाँ ! बिल्कुल ठीक हूँ। उन्होंने प्रश्नवाचक लहजे में कहा -- फिर ? मैंने कहा-- फिर क्या ! उत्तर से दक्षिण दिशा की ओर ऊँचाई से नीचाई की ओर और ऊर्ध्व लोक से अधःलोक की ओर जा रहा हूँ। उन्होंने मेरी बात पर गौर किये बिना पूछा -- कहाँ का टिकिट लिया है ? मैंने उत्तर दिया -- बांसवाडा का।

वे कहने लगे। कहते चले गये। उन्होंने बताया कि वे वहीं पर अधिकारी हैं। इंजीनियर हैं। माही प्रोजेक्ट में काम करते हैं। वहाँ नियुक्त होने से उस दिन तक के अनुभव सुनाते गये। अपनी जिज्ञासा की पूर्ति के लिए मैं कभी प्रश्न कर लेता। उसका वे उत्तर देते। ऐसे ही ऐसे मे चार घंटे गुजर गये। मेरा नई जगह से ओरिएंटेशन हो गया। नियत स्थान आ गया। उनकी जीप वहाँ मौजूद थी। उन्होंने कहा -- उतरिये। उनके साथ हम दोनों भी उतरे। जीप पहले उनके आवास पर पहुँची। हमको चाय पिलाई गई। वे रुक गये। उसी जीप से हम गुरुदेव के यहाँ जा पहुँचे। यात्रा पूरी हुई। गुरुदेव ने उनके आवास के सामने एक मकान मे हमको ठहराया। मकान सारा खाली। सब सुविधाएं पर झाड़ू मुझे ही निकालना पडता। भोजन--चाय की व्यवस्था गुरुदेव करते। पहुँच के दिन अपराह्न से ही हम लोग काम में लग गये।

मैंने गुरुदेव से पूछा -- एक यूनिट के लिए कितने व्याख्याता यहाँ हैं। कितने बाहर से बुलाने पड़ेंगे। उन्होंने बताया सेवानिवृत्त 3 यहाँ हैं। दो आप आ गये। दो युवा वर्ग के व्याख्याता और चाहिए। एक महिला यहाँ है। एक को बाहर से लाना होगा। गुरुदेव आगे कहने लगे -- व्याख्याता पद के लिए पात्र तो आप और मैं दो व्यक्ति है। जो बाहर से लायेंगे वह पात्र लायेंगे। शेष चार एमएड ता नहीं हैं। पर काम मे नये एमएड से कई गुना अच्छे हैं। वहाँ के सेवानिवृत्तों से हम परिचित थे। युवा वर्ग की एक स्थानीय व्याख्याता से गुरुदेव का पुराना परिचय था। उनका बुलाकर बातचीत करली गई। मेरे पास उपलब्ध नामो मे से एक आशार्थी को उदयपुर मे बुलाकर साक्षात्कार किया। उसको भी चुन लिया गया। हमारी सख्या सात हो गई।

व्याख्याताओ की व्यवस्था हुई। फिर भवन चाहिए -- कालेज का भवन छात्रावास के लिए भवन। काम शुरू करने के लिए सस्था के पास अपना स्कूली भवन था। छात्रावास के लिए भवन किराये लिया गया। भवन के अलावा भी बहुत–कुछ की जरूरत थी। फर्नीचर पुस्तके पाठ–सहायक सामग्री स्टेशनरी भोजन के लिए बर्तन और क्या कुछ नही ! सारी व्यवस्था क्रमश होती गई। जो वहाँ होनी थी वह वहाँ हुई। जो उदयपुर से होनी थी उसका मेरा जिम्मा था। उसको मैने बखूबी निभाया। जल्दी ही प्रवेश प्रार्थना पत्रो की प्राप्ति की समय सीमा समाप्त हुई। मेरिट–सूची बनाना चालू हुआ। बिना ज्यादा इन्तजार कराये विभागीय प्रतिनिधि आये। कालेज द्वारा तैयार सूची की जाच की। प्रवेश सूची को अतिम रूप दे गये। चयनित आशार्थियो को पत्र भेजे गये। आशार्थी आने लगे। शुल्क जमा होने लगा। क्रमश साठ की सख्या पूरी हुई। भारी–भरकम राशि जमा हुई। अभाव से ग्रस्त सस्था समृद्धि मे झूलने लगी। समृद्धि मे सलाहकार बढने लगते हैं। ऐसा वहाँ भी नजर आने लगा। नगर मे कालेज को 'कामधेनु' के रूप मे देखा जाने लगा। अभाव ग्रस्त सस्थाए तब बी एड कालेज इसी उद्देश्य से शुरू करने के यत्न करती थी। इस सस्था का क्षेत्र राष्ट्रीय नीति मे प्राथमिकता का क्षत्र था। सस्था का मनोरथ प्राथमिकता से पूरा हुआ था।

बी एड कालेज के केलेण्डर का रूप एक विशेष प्रकार का होता है। प्रवेश प्रक्रिया पूरी होते ही एक परिचय दिवस। इसमे प्रशिक्षणार्थी और कालेज स्टाफ एक–दूसरे से परिचित होते है। फिर सैद्धान्तिक शिक्षण – यह अभ्यास–शिक्षण के लिए प्रशिक्षणार्थियो को तैयार करता है। इसके बाद प्रदर्शन–पाठ इनको देखकर प्रशिक्षार्थी पढाने का आदर्श प्रदर्शन देखते हैं। फिर अभ्यास पाठ इस अवसर पर वे पाठ योजना बनाकर कक्षाओ को स्कूलो मे पढाने जाते हैं। व्याख्याता वहाँ पहुँच कर मार्गदर्शन देते हैं। इसके बाद समालोचना पाठ। ऐसा दो विषयो के लिए दो बार होता। इकाई योजना बनाने का अभ्यास ब्लाक प्रेक्टिस टीचिंग माइक्रो टीचिंग सेशनल वर्क टेस्ट ओपन एयर सेशन शैक्षिक–यात्रा आदि–आदि। फिर क्रियात्मक परीक्षा और उसके पश्चात सैद्धान्तिक परीक्षाएँ। इन सभी कर्मकाण्डो मे गुजरने पर एक सत्र पूरा होता। फिर चिर प्रतीक्षित ग्रीष्मावकाश आता। हम लोग विसर्जित होते। इसी प्रक्रिया म गुजरते–गुजरते चार सत्र गुजारे। मेरे पास पहले भी तीन साल का अनमोल अनुभव था। वह था भारतीयता पर अंग्रेजियत की छाया मे काम करने का अनुभव। परन्तु इन चार सालो का उससे कोई मुकाबला नहीं। यह था भारतीयता पर आदिलोक की छाया मे काम करने का अनुभव। दोनो की दो दिशाए। दो दिशाओ मे भी कल्पनातीत दूरियाँ। पर जीवन मे रस घोलने को पूरा सरजाम। कल्पनातीत घटनाए –

आया। गुरुदेव से बात हो गई। मेरा कमरा उनके आवास के बाहर बरामदे मे खुलता था। जाते हुए प्रशिक्षणार्थी को मैंने रोक कर पूछा क्या बात थी ? उसने स्थिति बताई। यह भी बताया कि गुरुदेव ने कल सवेरे आने को कहा है । वह चला गया।

मैने गुरुदेव को भीतर से बुलाया और कहा – वह बीमार लडकी आपके कालेज की है। कोई ऐरी–गैरी नहीं। रात को ही उसको कुछ हो गया तो आपका मुह काला होगा। कहा जायेगा कि आपको सूचना दी और आप वहाँ जाकर खडे तक नही हुए।

गुरुदेव ने कहा – तब क्या करूँ ?

मैने कहा – आपको अभी वहाँ जाना चाहिए। मैं भी चलता हूँ।

हम लोग पहुँचे। देखा कि बीमार के ड्रिप चढ रही थी। डाक्टर से हालत के बाबत जानकारी ली। दवा का इन्तजाम किया। वहाँ उपस्थित छात्रा को निर्देश दिये। एक चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी को घर से बुलाया। उसकी वहाँ रात भर की ड्यूटी लगाई। इसमे रात के एक–दो बज गये। हम घर चले आये।

मै अपने कमरे मे बिस्तर पर लेटा चिंतन करने लगा। मेरे मन मे एक प्रश्न आया – क्या गीता का स्थितप्रज्ञ इसी नमूने का इसान होता है ? और अगर एसा ही होता है तो फिर इसने इतने जजाल क्यों पाल रखे हैं ? मुझे कब नीद आई याद नही।

कालेज का 'स्टाफ रूम' अब ज्ञान–चर्चा का स्थल नही होता। उस अवसर के सिवा जब वहाँ ऐसी ही कोई बैठक हो। हम स्टाफ रूम मे बैठते खूब बाते करते। उस क्षेत्र के लोगो का मजाक उडाते। गुरुदेव भी सुनते। पर अनसुना कर देते। कभी थोडा मुस्कुरा देते। उस क्षेत्र के दो–तीन व्यक्तियो के प्रति उनम अपनत्व था गहन अपनत्व। माही–बाँध की डूब मे आई भूमि के मुआवजे का वे एक उदाहरण देते। एक आदिवासी को मुआवजे का करीब तीन लाख का चेक मिला। उसने कहा – मुझे तो नोट दीजिये रुपये दीजिये। चेक मेरे किस काम का ? चेक भुनवाया गया। नक़द रकम सौंपी गई। अब पहला काम उसने दूसरी शादी करने का किया। पहली पत्नी से सुन्दर पत्नी लाया। सुन्दर पत्नी का ज्यादा रुपया दिया जाता है। वह दे दिया। अपने सारे रिश्तेदारो को बुलाया इकट्ठा किया। खाओ पीओ और नाचो गाओ के दौर शुरु हुए। ये दौर चलते रहे। तब तक जब तक कि तीन लाख की इतिश्री नही हो गइ। इतिश्री होने पर कहा – बस अबे पधारो खेंगियो।

गुरुदेव इस व्यक्ति को वहाँ की सस्कृति के प्रतिनिधि व्यक्तित्व के रूप मे प्रस्तुत किया करते थे। ये कहते – वर्तमान मे जीना ही यहाँ की सस्कृति का प्रतीकात्मक व्यवहार है। इससे वहाँ के बाबत जितना कुछ समझा जा सके समझा जाना चाहिए।

चौथा सत्र भी पूरा हुआ। दो–तीन दिन के बाद घर आना था। गुरुदेव और मैं साध्या को औपचारिक बाते करते। आज भी कर रहे थे। मैंने गुरुदेव से कहा – अगले सत्र आपको एक काम तो करना ही है। गुरुदेव ने पूछा –क्या ? मैंने कहा– इन युवा और क्वालिफाइड व्याख्याताओ को अपने ही बराबर वेतन देना शुरू करना है। गुरुदेव ने पूछा – क्यो ? मैंने कहा – इस कारण कि उनके सामने भविष्य है। गृहस्थी है। हम लोग अपनी पारी खेल चुके। पेंशन मिल रही है। यहाँ पारिश्रमिक ले रहे हैं। हमें युवा वर्ग का शोषण नहीं करना चाहिए। वे यहाँ टिककर काम करे ऐसा कुछ आप कीजिये।

गुरुदेव ने कहा – आप नही समझते। यह सस्था चलाने का मामला है। सस्थाएँ ऐसे ही चलती है।

मैंने सहज भाव से कहा – हाँ ! मैं शायद न समझता होऊँ ।

पर मैंने यह भी समझ लिया कि अब कालेज चल निकला है। मेरी यहाँ आवश्यकता नहीं है। दो–तीन दिन बाद मैं घर आ गया।

– मेरे लडके ने पूछा – आप आ गये बाबूजी !

– मैंने कहा – हाँ ! और अब जाना भी नहीं है।

– मेरे लडके ने तपाक से कहा – यह सबसे अच्छी बात है।

– मैंने पूछा – कैसे कँवर साहब ?

– यह कहने लगा – मेरे 3–4 दोस्त हैं। हमने साथ–साथ टेकनिकल ट्रेनिंग ली थी। एक ही आदेश से नौकरी मिली। उन दोस्तो की पोस्टिंग उस क्षेत्र मे हुई। वे 5–7 साल वहाँ रहे। फिर प्रयत्न करके हमारे सस्थान मे स्थानान्तरण कराया। खुशी–खुशी आ गये। पर वे न तो सस्थान समय पर आते। न कक्षा पढाने जाते। जाते तो पढाते नहीं। न पढाने के लिए छात्रो से रोजाना कोई न कोई बहाना बनाते। कक्षा को छुट्टी दे देते। खुद किसी खाली कमरे मे जाकर सो जाते। प्राचार्य जी ने उन पर दबाव डाला। समय पर आना होगा। कक्षा पढानी होगी। सम्बन्धित काम भी करने होगे। तब फिर वे भाग खडे हुए। निदेशालय जाकर अपना स्थानान्तरण वही पुराने स्थानो पर कराया। जान बची लाखो पाये। उस क्षेत्र मे जो लम्बे समय रह लेता है इधर के लिए काम का नही रहता है। उस ओर क्रियात्मक परीक्षा लेने मैं और मेरे साथी कई बार जा चुके है। हमे स्पष्ट नजर आया है – पढवाने वाले की पढवाने मे रुचि नहीं पढाने वाले की पढाने मे रुचि नही पढने वाले की पढने मे रुचि नही। फिर भी चल रहा है। इस चलन मे बदलाव लाने मे ही अभी वर्षों चाहिए।

– मैंने कहा – तुम ठीक कहते हो। मैं वक्त पर आ गया।

गुरुदेव ने आगे कभी मुझसे आग्रह नहीं किया।

मुझको एक बार फिर आजादी मिली। पहली तब जब मैं राज्य सेवा से निवृत्त हुआ था। और दूसरी बार अब।

आया। गुरुदेव से बात हो गई। मेरा कमरा उनके आवास के बाहर बरामदे मे खुलता था। जाते हुए प्रशिक्षणार्थी को मैंने रोक कर पूछा क्या बात थी ? उसने स्थिति बताई। यह भी बताया कि गुरुदेव ने कल सवेरे आने को कहा है । वह चला गया।

मैने गुरुदेव को भीतर से बुलाया और कहा -- वह बीमार लडकी आपके कालेज की है। कोई ऐरी--गैरी नही। रात को ही उसको कुछ हो गया तो आपका मुह काला होगा। कहा जायगा कि आपको सूचना दी और आप वहाँ जाकर खडे तक नहीं हुए।

गुरुदेव ने कहा -- तब क्या करूँ ?

मैंने कहा -- आपको अभी वहाँ जाना चाहिए। मैं भी चलता हूँ।

हम लोग पहुँचे। देखा कि बीमार के ड्रिप चढ रही थी। डाक्टर से हालत के बाबत जानकारी ली। दवा का इन्तजाम किया। वहाँ उपस्थित छात्रो को निर्देश दिये। एक चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी को घर से बुलाया। उसकी वहाँ रात भर की ड्यूटी लगाई। इसमे रात के एक--दो बज गये। हम घर चल आये।

मैं अपन कमरे मे बिस्तर पर लेटा चितन करने लगा। मेरे मन मे एक प्रश्न आया -- क्या गीता का 'स्थितप्रज्ञ इसी नमूने का इसान होता है ? और अगर ऐसा ही होता है तो फिर इसने इतने जजाल क्यो पाल रखे हैं ? मुझे कब नीद आई याद नही।

कालेज का 'स्टाफ रूम अब ज्ञान--चर्चा का स्थल नही होता। उस अवसर क सिवा जब वहाँ ऐसी ही कोई बैठक हो। हम स्टाफ रूम मे बैठते खूब बात करते। उस क्षेत्र के लोगो का मजाक उडाते। गुरुदेव भी सुनते। पर अनसुना कर देते। कभी थोडा मुस्कुरा देते। उस क्षेत्र के दो--तीन व्यक्तियो के प्रति उनमे अपनत्व था गहन अपनत्व। माही--बाँध की डूब मे आई भूमि के मुआवजे का वे एक उदाहरण देते। एक आदिवासी को मुआवजे का करीब तीन लाख का चेक मिला। उसने कहा -- मुझ तो नोट दीजिये रुपये दीजिये। चेक मेरे किस काम का ? चेक भुनवाया गया। नकद रकम सौंपी गई। अब पहला काम उसने दूसरी शादी करने का किया। पहली पत्नी से सुन्दर पत्नी लाया। सुन्दर पत्नी का ज्यादा रुपया दिया जाता है। वह दे दिया। अपने सारे रिश्तेदारो को बुलाया इकट्ठा किया। खाओ पीओ और नाचो गाओ के दौर शुरु हुए। ये दौर चलते रहे। तब तक जब तक कि तीन लाख की इतिश्री नही हो गई। इतिश्री होने पर कहा -- बस अबे पधारो व्हेगियो।

गुरुदेव इस व्यक्ति को वहाँ की सस्कृति के प्रतिनिधि व्यक्तित्व के रूप मे प्रस्तुत किया करते थे। वे कहते -- वर्तमान मे जीना ही यहाँ की सस्कृति का प्रतीकात्मक व्यवहार है। इससे वहाँ के बाबत जितना कुछ समझा जा सके समझा जाना चाहिए।

एक आयाम यह भी

मैंने घर आकर सतोष की सास ली। खास कर इस कारण कि वापस नही जाना था। मैं अपने कार्यालय मे स्थापित हो गया। इसमे सबसे रुचि पूर्ण एक ही स्थान था। वह था मेरा आसन। मेरे मित्र अब इसको व्यासासन कहने लगे थे। खास कर इस कारण कि इस पर बैठकर लिखी मेरी रचना 'पडाव और मजिल पुरस्कृत हो चुकी थी। राजस्थान साहित्य अकादमी ने मुझे सम्मानित किया था। इसके अलावा भी लेखन की श्रेणी मे आने वाले मैंने कई काम किये। अवसर आने पर उनका जिक्र करूँगा।

हॉ ! तो घर आ जाने का मुझे एक बडा लाभ हुआ। आदिलोक की छाया' से मैं मुक्त हो गया। परन्तु जो छाया मुझ पर पड चुकी उसका प्रभाव साथ था। उससे मुक्ति मिलनी थी। फिर भी मैंने अपने पूर्व जीवन–क्रम की नये सिरे से शुरूआत की।

स्वास्थ्य की सभाल और साधना का क्रम तो वहॉ भी चलता था। परन्तु यहॉ का मेरा जीवन क्रम बहु–आयामी था। मै व्यासासन पर बैठता। मौलिक रचना कार्य करता। सेवा–निवृत्त अधिकारी परिषद् के काम–काज देखता। गैरसरकारी सस्थाओ की बैठको मे भाग लेता कभी कार्यकारिणी समिति की बैठक कभी स्टाफ चयन समिति की बैठक कभी कोई और। विभिन्न समारोहो मे भाग लेता। किन्ही बाहर से पधारे दिग्गज विद्वानो की वार्ताए सुनने जाता। अपने ज्ञान के विकास के इन स्रोतो का पूरा लाभ लेता। आमत्रण मिलने पर मै स्वय वार्ताए देने जाता। माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान द्वारा सौंपे गये सैकण्डरी स्कूलो के निरीक्षणो के लिए दूर–दूर की यात्राए करता। लोक सेवा आयोग राजस्थान के राजकीय सैकण्डरी स्कूलो के प्रधानाध्यापको के चयन मे विशेषज्ञ की तरह भाग लेता। मेरे कुटुम्ब के बच्चो के लिए डिबेटस लिखता। उनको बोलने का अभ्यास कराता। शहर मे आयोजित योगाभ्यास–शिविरो मे सहभागी बनता। शहर के आसपास के रमणीय स्थलो पर मित्रो के साथ–साथ 'पिकनिक पर जाता। सिद्ध–सन्तो के आश्रमो पर चुनिदा दोस्तो के साथ तीन–तीन चार–चार दिन के लिए जाता। साधना की विधि का अभ्यास करता। ऐसे सतो को अपने यहॉ आमत्रित करता। उनसे घटो सत्सग करता। उनके द्वारा कही गई मेरी पसद की बातो के नोटस लेता। मित्रो से मिलने उनसे हास्य–विनोद और विचारो के आदान–प्रदान के किसी भी अवसर को हाथ से नहीं जाने देता।

ऐसे प्राकृतिक बहाव मे मेरी जीवन नैया बहती चली जा रही थी। मुझे बैठको मे भाग लेने के आमत्रण मिलते रहते थे। ऐसी बैठके समाज मे जीवत रहने का माध्यम है। मै अधिकाशत शामिल होता। बैठक की शुरूआत के पहले और समाप्ति के बाद की अनौपचारिक बात–चीत जीवन म आनद घोलती है। एक बार मुझे सभागीय आयुक्त कार्यालय मे आयोजित 'चर्चा–समूह' मे भाग लेने का निमत्रण मिला। लिखा था – नीति सम्बन्धी कतिपय पहलुओ पर चर्चा की जानी है। कृपया अवश्य भाग लीजिये। मुझे अच्छा लगा। मुझे यह भी लगा कि ऐसा न्योता मिलना गौरव की बात है।

मै 'चर्चा–समूह' की बैठक मे शामिल हुआ। वहॉ कई साथी मौजूद थे। अधिकाश सेवा निवृत्त थे। सभी शिक्षा विभाग के थे। कुछ बाहर से भी बुलाये गये थे। बैठक निर्धारित समय पर शुरू हुई। आयुक्त ने अध्यक्षता की। चर्चा का श्रीगणश वहॉ के उपनिदेशक ने किया। कतिपय औपचारिकताएँ सम्पन्न हुईं। *फिर जन–जाति शैक्षिक विकास की विभिन्न प्रवत्तियो का ब्यौरा प्रस्तुत किया* गया। एक–एक पर चर्चा हुई। किसी पर सक्षेप मे। किसी पर विस्तार से। मूल प्रश्न थे – इनको प्रभावी कैसे बनाये ? इनमे किन प्रवृत्तियो को जोडा जा सकता है ? इनके फलितो की गुणात्मकता और परिमाणात्मकता को कैसे बढाया जाये ? प्रत्येक सहभागी ने चर्चा मे भाग लिया। आयुक्त ने चर्चा मे एक मुख्य भूमिका निभाई। उन्होने गुणात्मकता की अनदेखी करके परिमाणात्मकता की दिशा मे जाती चर्चाओ को नियत्रित किया। बैठक सयत वातावरण मे हुई। सचालित प्रवृत्तियो के स्वरूप पर कई सुझाव आये। कई प्रवृत्तियाँ नई सुझाई गईं। कई प्रवृत्तियो की प्रशसा की गई। बैठक करीब दो घटे चली। फिर हम सभी विसर्जित हुए। मेरे लिए यह एक बिल्कुल नया अनुभव था। सच्चाई यह भी कि जिस आदिलोक मे मैं रह आया था उस पर ये चर्चाएँ थी । सच्चाई यह भी कि सरकार कितना कुछ कर रही है। और मैंने वहा जो देखा और अनुभव किया वह भी कितना सच है ।

मेरा बहु आयामी जीवन–क्रम चल रहा था। मै सभागीय आयुक्त के यहा आयोजित बैठक को भूल चुका था। उस बठक का बीस–पचीस दिन हुए होगे। तभी मेरे एक नजदीकी मित्र का टेलीफोन आया। य जयपुर से आत रहते थे। उन्होने कहा कि मुझे आपसे मिलने आना है। मैंन उत्तर दिया – जब चाहो आ जाओ । मै यही हूँ। उन्होने कहा – आता हूँ। वे मिलने चले आये। काफी देर तक बातचीत होती रहीं । वे भी उस दिन कमिश्नर के कार्यालय मे आयोजित चर्चा–समूह मे शामिल थे । उनके द्वारा आज भेद खोला गया कि वह चचा तो मात्र एक माध्यम थी। यह जानने के लिए आप लोगो मे कौन उनके काम को बखूबी कर सकता है। किसी भावी पद के लिए साक्षात्कार लेना वह भी आप

जैसो का वह सम्मानजनक नही था। आपको उन्होने निदेशक–प्रशिक्षण के लिए चुना है। आपके द्वारा जनजाति के आशार्थियो के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाये जाने हैं। मैंने पूछा – क्या आपने उनको मेरी ओर से स्वीकति दे दी ? उत्तर मिला – क्या करता । वैसे मैं आप उदयपुर वालो की उनस काफी तारीफ करता रहा हूँ। उसी आधार पर मुझे कहा गया – ऐसे अच्छे लोग किस काम के जो राष्ट्र के महत्वपूर्ण कार्य मे भागीदार न बने। आप राजी कीजिये उनको। अत मैं भी मजबूर हा गया। आपको यह चुनौती स्वीकारनी होगी।

मैने कहा – आदिलोक के फदे से कुछ समय पहले ही तो छूटा हूँ। मुश्किल से एक साल हुआ होगा। फिर नया फदा।

मित्र बोले – कुछ भी कहो। जितने दिन चले चलाना । वहा का कारोबार समझ मे न आये छोड देना। वैसे ही बाहर तो जाना नही है। आप कल ही पहुँचिये। सभागीय आयुक्त से मिलिये। वहॉ पर शिक्षा उपनिदेशक हैं। उन्हे आप जानते हैं। वे आपकी मुलाकात करा देगे।

मैं एक बार फिर मजबूर हो गया। मैंने मित्र की बात मान ली। वे खुश हुए। वे कहने लगे – मुझे डर था। आप अनेक बार अनको के सामने कह चुके हैं पेशन के बाद नोकरी नही करूँगा। आजादी का अभ्यास करूँगा। अपनी मौलिकता से प्रमाणित करूँगा कि आजादी आजादी है। एक बार आप फदे मे फस चुक। दूसरी बार क्यो तैयार हाग । पर मैं आया इसलिये कि मुझे आना पडा। आपने मेरा भार हल्का कर दिया।

वे और भी कुछ कहते। पर मन उनके कथन पर विराम लगाया। मैं बोला – ऐसा तो कुछ नहीं है। परन्तु सेवा से निवृत्ति की अब असली उम्र आ चुकी है। मेरे मित्र ने कहा – एक–दो साल उसे आगे धकेलिये। मैंने उनको अनमने भाव से उत्तर दिया – यही तो मजबूरी है आपकी भी और मेरी भी।

हमारी बात–चीत पूरी हुई। मैं दूसरे दिन ठीक दस बजे सभागीय आयुक्त के कार्यालय पहुँचा। शिक्षा–उपनिदेशक से मिला। मुझे उन्होने ससम्मान एक कुर्सी पर बिठाया। मेरे काम की प्रकत्ति की जानकारी दी। वहाँ के सम्बन्धित व्यक्तियो से परिचय कराया। फिर आयुक्त महोदया के वैयक्तिक सहायक से सम्पर्क किया। मेरी वहाँ पहुँच की सूचना देकर मेरे लिए आयुक्त महोदया से मिलने का समय तय कराने को कहा। उत्तर मिला – निवेदन करके आपको सूचना देता हूँ।

इस बीच मुझे कुछ समय मिला। मैंने आयुक्त महोदया की प्रकृति कार्यशैली और वहाँ की विशिष्ट औपचारिकताओ के बाबत जानकारी हासिल की। मेरी कार्यशैली के अनुसार मैंने वही से एक नया 'स्लिप पेड प्राप्त कर लिया। मेरा

अपना पेन मेरे पास था। बुलावा आते ही हम दोनो आयुक्त महादेया के चेम्बर मे पहुँच। यह चम्बर इस पद क अनुरूप था – बहुत बडा । मैन अब तक किसी अधिकारी का इतना बडा् चेम्बर नही देखा था। समय–समय पर आने वाले उच्च पदधारक अधिकारियो और उनकी सभावित सख्या की दृष्टि से वहाँ यथेष्ठ व्यवस्था थी। हमने आयुक्त महोदया को अभिवादन किया। सकेत मिलने पर हम सामन कुर्सी पर बेठ गये।

उन्होने मेरी ओर सम्बोधन करके कहा – आज आपने 'कोर्स डाईरेक्टर का चार्ज ले लिया ?

मैने उत्तर दिया – जी मैडम ! पहले आपके सामने उपस्थित होकर मार्गदर्शन लेना जरूरी समझा। ज्वाईनिग रिपोर्ट मैं आज ही प्रस्तुत कर दूँगा।

उन्होने उपनिदेशक की ओर सम्बोधन करके कहा – आज ही ज्वाइनिग रिपोर्ट लीजिये। फिर उन्होने भावी प्रतियोगिता – परीक्षाओ का जिक्र किया। एक शुरूआती 'कोचिग कोर्स की बात कही। उसकी प्रवेश विज्ञप्ति उसी दिन तैयार करने का आदेश दिया। इस कोर्स से सम्बन्धित कार्यों का केलेडर बनाने का कहा। यह भी चाहा कि इसकी एक समग्र योजना तैयार करूँ। मुझ को यह भी कहा कि इस कोर्स के लिए जरूरी व्याख्याताओ की तलाशी शुरू कर दूँ – आदि आदि।

मैं उनके द्वारा कही बाते लिखता जाता। किसी बात पर अधिक जानकारी लेता। किसी पक्ष पर स्वय भी प्रश्न करता । यह भेट करीब आधा घटा चली। काफी–कुछ स्पष्ट हो गया था। उनकी तरफ से ज्योही विराम आया मैने उनसे इजाजत मागी यह कहते हुए कि मुझे तो आपसे काफी मार्गदर्शन लेना होगा। इस कथन ने गभीर वातावरण को कुछ हल्का बना दिया। हमने झुक कर वहाँ से बिदाई ली। हम चेम्बर से बाहर हो गये। मुझे लगा कि मैं जिम्मेदारियो के शिकजे मे फस गया हूँ। परन्तु बचने का कोई रास्ता भी नही था।

उपनिदेशक के कार्यालय मे बैठकर मैं काम पर जुट गया। मेरा प्रथम काम था प्रवेश विज्ञप्ति तैयार करना। एक विज्ञप्ति तैयार करना मेरे लिए काफी था। इसको तैयार करने मे मुझे वहाँ की काफी जानकारी मिल गई। उदाहरणत किस दिन विज्ञप्ति प्रकाशित होगी। प्रार्थना पत्र किस दिनाक तक प्राप्त होगे। किस दिनाक को चयनित आशार्थियो की सूची प्रकाशित कर दी जायेगी। सूचना के प्रकाशन के पश्चात् 'कोचिग' सेटर पर पहुँचने को कितने दिन दिये जायेगे। किस दिनाक से आर ए एस जनजाति आशार्थियो के 'कोचिग की शुरूआत होगी। यह कितने सप्ताह का होगा। किस स्थान पर यह सचालित होगा आदि आदि।

उपनिदेशक और मै हम दोनो आयुक्त से मिलने गये। विज्ञप्ति के प्रारुप पर उनका अनुमोदन प्राप्त किया। उसी के साथ–साथ कोचिग के प्रारभ होने तक के केलेडर पर भी बातचीत हो गई। उन्होने केलेण्डर पर भी अपनी सहमति व्यक्त की। कई वर्षो के पश्चात् इतना व्यस्त दिन आज का था। कार्यालय समय पूरा हुआ। मैं घर आया।

अब निश्चित समय पर तैयार होता। कार्यालय पहुँचता। दिन भर व्यस्त रहता। थक कर घर आता। यह सिलसिला शुरू हो गया। कोचिग सेटर की कल्पना आयुक्त की थी। उसको साकार मुझे करनी थी। जरूरी था कि मै एक आलेख तैयार करूँ उस 'कार्य–योजना का जो मेंने उनसे समझी थी। मैं 'कार्य–योजना का आलेख तैयार करने मे जुट गया।

योजनाए मैंने खूब बनाई हैं। इनका मुझको अभ्यास है। जो योजना मैं बना रहा था उसके सारे तथ्य मेरे पास थे। सिवा एक तथ्य के कि यह 'कोचिग कैसे होता है। यह शिक्षण' से भिन्न है। यह 'प्रशिक्षण भी नही है। यह अनुशिक्षण' (टयूशन) भी नही है। यह इतना–कुछ नही है इसीलिए शायद 'कोचिग' है। इस पक्ष पर मैं लगातार चितन करता। परन्तु कार्य–योजना के अन्य पक्षो को लिखता भी जाता। सोचा था – शहर मे कई 'कोचिग सेटर चलते हैं। एक–दो सेटर्स पर जाऊँगा । कोचिग तकनीक का अवलोकन करूँगा। कतिपय 'कोचेज से मिलूगा। उनसे कार्य करने के गुर जानने की कोशिश करूँगा। वे बता सके न बता सके मै सार निकाल लूँगा। मैं 'सेटर्स के सचालको से मिलूगा। व्यवस्थात्मक पक्षो पर जानकारी लूँगा। इस प्रकार मैं अपने–आपको 'कोचिग सेटर' का कुशल निदेशक बना लूँगा। वैसे मैं जमाने की रविश को पहचानता हूँ। कोई इन तीनो कामो मे से एक भी न करे। सिर्फ लफाजी करदे – मेने यह सब–कुछ किया है। तब भी सामान्य व्यक्ति उसे विशेषज्ञ मानने लगता है।

मै समय निकाल कर कोचिग सेटर्स पर जाता। उनको अच्छी तरह देखता। सचालक से और कोचेज से मिलता। अपने नोटस लेता।
यह प्रक्रिया चल रही थी। तभी एक हुआ।
मिले। वे आर ए एस अधिकारी थे। मे ही है
आप 'कोर्स–डायरेक्टर बने हैं। मैं हूँ म
तपाक से कहा – मैं काम के व्यक्ति
प्रकार अनुगृहीत करेगे ? कहने लगे
चलाता था। कई
अधिकारी बन हुई
दी। प्रथम प्रयत्न

विभाग मे है। मेरी खुशी का ठिकाना नही। मैने कहा – आप दर असल मेरे लिए काम के है। मुझ 'कोचिग सेटर पर 'व्यवस्था और 'कोचिग–तकनीक पर मार्गदर्शन दीजिये। बताइये कब ? सच्चाई तो यह है कि मेरी योजना के ये दो अग ही बचे हुए है। यह कह कर मैंने अपना आलेख उनके सामने रख दिया। वे रुचि के साथ उसको पढने लगे। एक के बाद एक पृष्ठ पढते गये।

योजना को पढ चुकने पर उन्होने कहा – आपका काम बडा सिस्टेमेटिक है। मुझे बहुत अच्छा लगा। आप जैसे योजना–निर्माता को कहने को मेरे पास ज्यादा नहीं है। बिन्दुवार बात करनी है। आइये ! अभी ही यह काम करले। मैं भी यही चाहता था। मैंने कहा – आप लिखेगे या मैं लिखूँगा। उन्होने कहा – आप लिखिये। मैं अपनी बात कहता जाता हूँ। आप अपनी भाषा मे लिखते चलिये। इस प्रकार मेरी योजना मे 'व्यवस्था' और 'कोचिग तकनीक' के अश पूरे हुए। मेरी बहुत बडी गुत्थी सुलझ गई। सेटर चलाने का मार्ग सुस्पष्ट और कारगर बन गया। यह आयाम मेरे लिए बिल्कुल नया था। फिर भी मुझे लगने लगा कि मैं कुछ न कुछ कर गुजरूँगा।

दूसरे दिन मैंने 'कार्य–योजना' को ठीक ठाक किया। अब वह आयुक्त को भेजने योग्य थी। मैंने मार्गदर्शनार्थ उनको भेज दी। फिर मैं अन्य कार्यों मे लग गया। अन्य काम भी कम नही थे। प्रशिक्षण के लिए निर्धारित भवन की आवाप्ति। वहाँ पर वाछित कक्षो की सुविधा का आकलन करना। लिपिक एव चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियो की नियुक्ति कराना। छात्रावास की ओर वार्डन की व्यवस्था तथा अन्य कई छोटी–बडी आवश्यकताओ की पूर्ति की गई।

इस क्रम म सबस महत्वपूर्ण काम था व्याख्याताओ का चुनना। आयुक्त ने यह काम मुझ पर छोड दिया था। इसलिए मेरी जिम्मेदारी ज्यादा थी। प्रथम चरण परीक्षा वैसे आसान थी। एक अनिवार्य प्रश्न पत्र होता था। इसमे सामान्य ज्ञान और सामान्य विज्ञान विषय थे। परन्तु इनका क्षेत्र बहुत व्यापक था। इसमे – वर्तमान घटनाक्रम सामान्य विज्ञान भूगोल प्राकतिक ससाधन कृषि और आर्थिक विकास तथा इतिहास ओर सस्कति को स्थान था। इतने व्यापक क्षेत्र को करीब दो मास मे पढाना – एक बडा काम। पढाने के साथ प्रश्न पत्र के प्रश्नो के स्वरुप के अनुसार उत्तर देना सिखाना – गुरुतर काम। और जनजाति–छात्रो के स्वभाव को देखते हुए यह गुरुतम काम था। मैंने अतिथि–व्याख्याताओ की बजाय पूर्ण समय व्याख्याता रखना सोचा। एक प्रश्न–पत्र की विषय–वस्तु के चार विभाग किये। प्रत्येक विभाग का एक–एक व्याख्याता चुना। मैने 'कोचिग' की शैली सीखी थी। उस शैली पर उनका अभिमुखीकरण किया। उनके साथ बैठकर उस शैली के 'लेसन नोटस तैयार करने की विधा विकसित की। इस प्रकार चारो सहायको को 'कोच के रूप मे प्रतिष्ठापित किया। यो हमारी तैयारी पूरी हुई।

हमको कोई तैयारी नही करनी पडी। सिवा इसके कि दिखाने की सारी सामग्री दिखाने को इकटठी की। उसको व्यवस्थित किया। क्रमबद्ध किया। कक्षा–शिक्षण यथा क्रम चल रहा था। मेरे साथी 'स्टाफ रूम मे अपने अपने काम मे व्यस्त थे।

आयुक्त का यथासमय आना हुआ। मैंने उनका स्वागत किया। पहले उनको मेरे कक्ष मे लाया। उनको कार्य सचालन की प्रक्रिया का विवरण प्रस्तुत किया। फिर प्रत्येक कोच द्वारा दी गई वार्ताओं के आलेख दिखाये। चारो के ऐसे आलेख चार फाइलो मे सुरक्षित थे। मैंने उनको बताया कि ये आलेख चक्राकित कराये जाने हैं। फिर जिल्द बधाई जावेगी। प्रत्येक को एक–एक पाठयक्रम के अतिम दिन वितरित किये जायेगे। दैनिक–समय–विभाग–चक्र की उनको जानकारी दी। फिर उनको कक्षा मे ले गया। वहा चल रहे शिक्षण–कार्य का उन्होने अवलोकन किया। इसी अवसर पर मैंने एक–दो छात्रो की अभ्यास पुस्तिकाए उनको दिखाई। उनके कार्य को उन्होने देखा। फिर कक्षा से बात–चीत करने को मैंने उनसे निवेदन किया। उन्होने एक–एक छात्रा से बात की। उनकी प्रतिक्रिया जानी। फिर मैं 'स्टाफ रूम मे उनको ले गया। वहीं इस पाठयक्रम के लिए इकटठे किये गये साहित्य का उन्होने अवलोकन किया। मेरे साथियो का उनसे परिचय कराया। अनौपचारिक बातचीत चाय की टेबिल पर होती है। इसकी भी व्यवस्था की गई थी। इस अवसर का लाभ लेकर मैंने कमिश्नर से निवेदन किया – आपकी इस पाठयक्रम पर कोई टिप्पणी सुझाव या मार्गदर्शन मेडम । उनका सक्षिप्त उत्तर था – आप लोग बहुत अच्छा कर रहे हैं। मैं अपने साथियो को भी इस 'कोर्स को देखने भेजूगी। फिर वहाँ के अन्य अधिकारी भी आने लगे। जन–जाति विकास मत्री महोदय ने इस पाठयक्रम के दिनो पधार कर जानकारी हासिल की। छात्रो से सम्पर्क किया। अन्य प्रतियोगी परीक्षाओ के लिए भी पाठयक्रम चलाते रहने के निर्देश दिये।

इस केन्द्र की ख्याति बढने लगी। एक के बाद एक पाठयक्रम चलाने का दायित्व आता गया। आर ए एस प्रथम चरण का कार्य सम्पन्न हुआ। फिर कनिष्ठ लेखाकार विशेष भर्ती प्रतियोगिता के लिए पाठयक्रम का दायित्व सभाला। यह पाठयक्रम चल ही रहा था कि आर ए एस प्रथम चरण परीक्षा का परिणाम घोषित हो गया।

इस परिणाम ने हमारे 'कोचिग सेटर के उत्कृष्ट कार्य का डका बजा दिया। यहाँ प्रवेश प्राप्त ग्यारह मे से चार छात्र उत्तीर्ण घोषित हुए। यह इस वर्ग की सफलता का सर्वोच्च कीर्तिमान् था।

समाचार–पत्रो मे विज्ञापित दिनाक तक प्रवेश कार्य चला। उस दिन से ही कोचिग शुरू किया गया। परन्तु बाद म भी प्रवेश खुले रखे गये। इससे लाम लेने वालो की सख्या बढती गई।

इस कार्यक्रम मे शिक्षण तकनीक को विशेष रूप दिया गया। परीक्षा मे उत्तर दो सौ शब्दो मे पचास शब्दो मे और पद्रह शब्दो मे मागे जाते थे। इन तीन प्रकार के उत्तरो को कक्षा–शिक्षण का आधार बनाया। वार्ता की तैयारी इसी अनुसार की जाती। प्रत्येक शीर्षक पर शुरूआत विहगम चित्र प्रस्तुत करके की जाती। फिर उससे सभावित वे प्रश्न जिनका उत्तर दो सौ शब्दो का हो सकता था उन पर अभ्यास कराया जाता। शुरूआत 'काच के द्वारा श्याम–पट्ट पर नमूने के उत्तर लिखकर की जाती। फिर छात्रो से कक्षा मे अभ्यास कराया जाता। कभी मौखिक उत्तर प्राप्त करके कभी उत्तर को श्याम–पट्ट पर लिखवाकर कभी वही पर अभ्यास पुस्तिका मे लिखवा कर और बारी–बारी से वाचन करवा कर यह कार्य होता। यही तरीका पचास शब्दो वाले और पद्रह शब्दो वाले उत्तरो के लिये भी अपनाया जाता। प्रत्येक वार्ता के लिए कडाई से इसी तरीके का पालन किया जाता। किसी भी एक शीर्षक की विषय–वस्तु इस प्रकार चार बार कक्षा के सामने प्रस्तुत हो जाती। ऐसा होना आवश्यक था। आवश्यक ही नहीं अनिवार्य था। कारण कि हमारी योजना मे यह अनुमान भी शामिल था कि गृह–कार्य करा पाना शायद सभव न हो। अत सारा जोर कक्षा–कार्य पर दिया गया था।

पाठ्यक्रम चलते छ सात दिन हुए होगे। आयुक्त ने मुझ को मिलने के लिये बुलाया। मैं उस दिन पूर्वाह्न मे ही उनके कार्यालय पहुँचा। मैंने अपनी पहुच की उनको सूचना भेजी। मुझे बुलाया गया। मैं उनके चेम्बर मे उपस्थित हुआ। वहाँ के शिक्षा–उपनिदेशक भी साथ थे। उन्होने मुझसे प्रश्न किया – कहिए ! कोर्स कैसा चल रहा है ? मेरे मुह से शब्द निकले – मैडम ! मैं यह कोर्स आपकी ओर से चला रहा हूँ। आप देखिये। आप अपनी राय बनाइये। इस कथन पर उन्होने पूछा – तब फिर आज अपराह्न मे हम आये ? मैंने कहा – अवश्य। आप जितनी जल्दी पधारेगी सुधार के लिए सुझाव हमको उतने ही जल्दी मिलेगे। उतना ही ज्यादा सुधार हम कर पायेगे। उत्तर मिला – अच्छा है ! हम आ रहे हैं।

आयुक्त से मिलकर मैं अपने 'कोचिग सेटर आया। मेरे साथियों को जानकारी दी। सभी अपने–अपने विषय के महारथी थे। कहने लगे – कितनी अच्छी बात है ! हम इतनी मेहनत कर रहे हैं। वे देखने आवेगी तभी तो जानेगी कि हमारे प्रयत्न में कोई कोर–कसर नहीं है। आगे तो विद्यार्थियो का प्रयत्न और उनका भाग्य।

हमको कोई तैयारी नही करनी पडी। सिवा इसके कि दिखाने की सारी सामग्री दिखाने को इकट्ठी की। उसको व्यवस्थित किया। क्रमबद्ध किया। कक्षा–शिक्षण यथा क्रम चल रहा था। मेरे साथी स्टाफ रूम मे अपने अपने काम मे व्यस्त थे।

आयुक्त का यथासमय आना हुआ। मैंने उनका स्वागत किया। पहले उनको मेरे कक्ष मे लाया। उनको कार्य सचालन की प्रक्रिया का विवरण प्रस्तुत किया। फिर प्रत्येक कोच द्वारा दी गई वार्ताओ के आलेख दिखाये। चारो के ऐसे आलेख चार फाइलो मे सुरक्षित थे। मैंने उनको बताया कि ये आलेख चक्राकित कराये जाने हैं। फिर जिल्द बधाई जावेगी। प्रत्येक को एक–एक पाठ्यक्रम के अतिम दिन वितरित किये जायेगे। दैनिक–समय–विभाग–चक्र की उनको जानकारी दी। फिर उनको कक्षा मे ले गया। वहा चल रहे शिक्षण–कार्य का उन्होने अवलोकन किया। इसी अवसर पर मैंने एक–दो छात्रो की अभ्यास पुस्तिकाए उनको दिखाई। उनके कार्य को उन्होने देखा। फिर कक्षा से बात–चीत करने को मैंने उनसे निवेदन किया। उन्होने एक–एक छात्रा से बात की। उनकी प्रतिक्रिया जानी। फिर मैं स्टाफ रूम मे उनको ले गया। वहीं इस पाठ्यक्रम के लिए इकट्ठे किये गये साहित्य का उन्होने अवलोकन किया। मेरे साथियो का उनसे परिचय कराया। अनौपचारिक बातचीत चाय की टेबिल पर होती है। इसकी भी व्यवस्था की गई थी। इस अवसर का लाभ लेकर मैंने कमिश्नर से निवेदन किया – आपकी इस पाठ्यक्रम पर कोई टिप्पणी सुझाव या मार्गदर्शन मैडम। उनका सक्षिप्त उत्तर था – आप लोग बहुत अच्छा कर रहे हैं। मैं अपने साथियो को भी इस कोर्स को देखने भेजूगी। फिर यहाँ के अन्य अधिकारी भी आने लगे। जन–जाति विकास मत्री महोदय ने इस पाठ्यक्रम के दिनो पधार कर जानकारी हासिल की। छात्रो से सम्पर्क किया। अन्य प्रतियोगी परीक्षाओ के लिए भी पाठ्यक्रम चलाते रहन के निर्देश दिये।

इस केन्द्र की ख्याति बढने लगी। एक के बाद एक पाठ्यक्रम चलाने का दायित्व आता गया। आर ए एस प्रथम चरण का कार्य सम्पन्न हुआ। फिर कनिष्ठ लेखाकार विशेष भर्ती प्रतियोगिता के लिए पाठ्यक्रम का दायित्व सभाला। यह पाठ्यक्रम चल ही रहा था कि आर ए एस प्रथम चरण परीक्षा का परिणाम घोषित हो गया।

इस परिणाम ने हमारे कोचिंग सेटर के उत्कृष्ट कार्य का डका बजा दिया। यहाँ प्रवेश प्राप्त ग्यारह मे से चार छात्र उत्तीर्ण घोषित हुए। यह इस वर्ग की सफलता का सर्वोच्च कीर्तिमान् था।

अब आर ए एस द्वितीय चरण परीक्षा के लिए पाठयक्रम शुरू करना पड़ा। जब यह पाठयक्रम पूरा हुआ तो आयुक्त ने मुझे आदेश दिया कि इस केन्द्र को स्थाई रूप दिया जाना है। इसके लिए मैं एक व्यापक योजना तैयार करू। मैंने उस कार्य का श्रीगणेश किया। इसके साथ-साथ तीनो पाठयक्रमो के प्रतिवेदन तैयार किये। उनको कमिश्नर को प्रेषित किया।

उन्होने मुझसे अगली आर ए एस प्रथम चरण परीक्षा के लिए पाठयक्रम चलाने को कहा। वह योजना मैने बनाई। उनको प्रेषित कर दी। कुछ दिन बाद कमिश्नर का स्थानान्तरण हो गया। जाते हुए उन्होने मुझसे आग्रह किया – आप काम करते रहिये। मेने साभार उत्तर दिया – जी मेडम ! वे चली गईं। महीनो बाद नये कमिश्नर महोदय ने मुझे बुलाया। आदेश दिया – आप पाठयक्रम शुरू कीजिये। मैने उत्तर दिया – जी जरूर। पहले यह पता लगाना होगा कि परीक्षा कबसे है ? उन्होने कहा – ठीक है।

मुझे मालूम हुआ कि उस दिन के बीस दिन बाद परीक्षा शुरू होनी है। मैंने आयुक्त महोदय को वस्तुस्थिति बताई। पाठयक्रम नही करना तय हुआ। कहा गया – आपकी सेवाऍं द्वितीय चरण के अवसर पर ली जावेगी। मैंने मन मे कहा – अब तो न ली जाये वही ठीक है।

अब तक का सारा घटनाक्रम नियोक्ता और कर्मचारी की भूमिका को उजागर करता है। वास्तविक उपभोक्ता – जनजाति विद्यार्थी को जानना भी जरूरी है। सिखाने-सीखने की प्रक्रिया के हमारे अनुभव मौलिक थे। अनुभव अनेक हैं। कई ऐसे जिनकी लगातार आवृत्ति हुई। उनके नमूने प्रस्तुत करना ठीक होगा। दैनिक शिक्षण-कार्य प्रथम कालाश से शुरू होता है। परन्तु इस पाठयक्रम का प्रथम कालाश ऐसा रहा जिसमे सभी छात्र कभी उपस्थित नहीं हुए। कई के पास घड़िया थी। समय की पाबदी मे कभी किसी से और कभी किसी से गफलत हो ही जाती। हमने इस कालाश के प्रारभ का समय तो वही रखा। परन्तु अवधि अघोषित रूप मे बढाकर काम चलाया। मध्या भोजन अवकाश के बाद के कालाश मे भी यही होता। इसका कारण भिन्न था। भोजन के पश्चात् ये अपने-अपने कमरे मे सो जाते। मेरे स्टाफ म सबसे कम आयु के व्याख्याता ने उनको जगाने की सेवा खुद ही सभाल ली। वे जाते। कमरो के दरवाजे खटखटाते। वे लोग जगकर शर्मिन्दगी की हँसी हँसते हुए आते। हम सभी आपस मे इस स्थिति का आनद लेते। लिखने का अभ्यास गृह-कार्य और कक्षा-कार्य से कराया जाता है। हमने कोशिश की। पूरी कोशिश की। परन्तु किसी ने भी गृह-कार्य करके नही दिखाया। हमने कक्षा-कार्य को व्यापक बनाया।

तब परीक्षा मे तीन प्रकार के प्रश्न पूछे जाते थे। किसी प्रकार का प्रश्न किसी भी पाठ पर हो सकता था। हम प्रत्येक पाठ पर तीन प्रकार के प्रश्न तैयार करते। तीनो प्रकार के उत्तर लिखने का काम हम कक्षा मे ही कराते। कक्षा–कार्य का यह विराट रूप था। बडा कष्टसाध्य था। पर सफल रहा। सार्थक रहा।

हमारा प्रथम टेस्ट लेने का अनुभव अभूतपूर्व था। प्रथम बार हमने छात्रो को अग्रिम सूचना दी। जिससे वे तैयारी कर ले। टेस्ट का दिनाक बता दिया था। उस दिन सोमवार था। ग्यारह बजे शुरू करना था। कोई भी उपस्थित नही। अपराह्न मे एक–एक करके आने लगे। पूछा तो बताया – सर ! देर हो गई। इससे ज्यादा कुछ नही। इसके पश्चात हमने कभी भी सूचना देकर टेस्ट नही लिया। वे कभी पूछते तो हम टाल जाते। पर एक निश्चित अन्तराल के पश्चात् टेस्ट जरूर लेते। हम टेस्ट–पेपर तैयार रखते। जिस दिन सभी उपस्थित होते टेस्ट लिया जाता। उस दिन भोजन–अवकाश नहीं होता। उनको नाश्ते की पूरी व्यवस्था मैं अपनी ओर से कक्षा मे ही करता। यह सब इसलिए कि सभी टेस्ट पेपर का पूरा–पूरा उत्तर लिखे। हमे खुशी इस बात की कि सभी शामिल थे। वे खुश इस बात पर कि हमने सर की ओर से चाय नाश्ता किया।

इस सब कुछ ने आदिलोक के मेरे अनुभवो मे कई नये आयाम जोडे। शिक्षा विशेषज्ञ के रूप मे एक सीख भी – जनजाति शिक्षा का विकास सवर्ण जनित अनुशासन के अधीन सभव नहीं है। वह तो जनजाति जन्य अनुशासन को स्वीकार कर के ही किया जा सकता है। यह तब सभव है जब शिक्षक उतने धैर्यवान और कार्यकुशल हो जैसे इस केन्द्र ने जुटाये थे।

आयुक्त–कार्यालय से बाद में बुलावा नही आया।

मैंने सोचा पीछा छूटा। यह मेरी तीसरी बन्धन–मुक्ति थी।

9

लेखन का लेखा

मै अधिकाश समय कायालय म गुजारता । इसम मेरा आसन था। इस आसन के बाबत मैं पहले बता चुका हूँ। आसन के सामने मेरी टेबिल। यह लेखक की टेबिल थी। लेखन--सामग्री इस पर व्यवस्थित। सामने दीवार पर सिद्धगणपति का चित्रा टगा था। मेरे क्लिपबोर्ड पर फुलस्केप साईज के कागज लगे थे। बराबर कटे हुए स्वच्छ धवल। मैने अपना पार्कर–पेन उठाया। मैं लिखना शुरू करू कि मेरी दृष्टि सिद्धगणपति के चित्र पर जा टिकी। अन्तरात्मा के अतल गह्वर से कोई गणपति को सम्बोधन कर बोल पडा –

ए विवेक के देवता ! आप कभी 'स्टेनो' बने थे। तब कृष्णद्वैपायन व्यास ने आपको 'डिक्टेशन दिया था। महाभारत जैसे महान् ग्रन्थ की रचना हुई थी। आप 'स्टेनो बन कर बरी जिम्मा नही हुए। किसी को डिक्टेशन देना भी बाकी है। वह मै हूँ। आज से आप मुझको डिक्टेशन देगे। मैं आपका स्टेनो। मे सस्मरण लिख रहा हूँ। पचास वर्ष के। उस दिन तब मैं स्कूल गया। और ये दिन जब निवृत्त होकर घर आया। पूरी आधी शताब्दी – अनेक पडाव अनेक मजिल। मेरी यही – एक शैक्षिक यात्रा । जब मैं स्कूल गया बमुश्किल पाच वर्ष का था। आपकी अर्चना पूजा कर स्कूल गया था। आप तब से मेरे साथ हैं। पचपन वर्ष पूरे किये। मैं बहुत–कुछ भूला पर आपको याद है। लिखाइये ! लिखता हूँ।

सरकारी कार्यालय का समय मेरे लिखने का समय होता। उस समय मे भी कोई मिलने आता मैं लिखना बद कर देता। घर से बाहर निकलना पडता काम बन्द रहता। शहर स बाहर जाता कई दिनो लिखना बन्द रहता। हारी–बीमारी म लिखने का काम नही। छोटा–बडा लिखने का काम आ पडता उसको पहले निपटाता। अन्यथा 'एक शैक्षिक यात्रा चलती रहती। अनवरत रूप से चलती।

जब–जब मै लिखने बैठता गणपति जी का आह्वान करता । कहता – आइये ! लिखाइये ! मै लिखने लगता। मैं लिखने का लेखा रखता। बडा आसान काम। हाशिये पर दिनाक लिखता। फिर लिखना शुरू करता। लेखन मे किसी एक दिन कई अन्तराल आते। पर दिनाक वही बना रखता। दिन बदल जाता तो तारीख बदल जाती । शर्त एक ही कि मैं लिखना शुरू करू । कभी लिखने का काम नही होता। उस दिन का दिनाक हाशिये

पर नही लिखता। कई दिन तक लिखना नही होता। कई दिनाक हाशिये से नदारद रहते। पाडुलिपि के प्रथम पृष्ठ पर लिखना शुरू करने का दिनाक अकित होता। अतिम पृष्ठ पर समाप्ति दिनाक लिखता। कब से कब तक उस पर काम किया ? इसके लिए प्रथम और अतिम पृष्ठ पर अकित दिनाक काफी थे। लेख हो वार्ता हो या अन्य किसी प्रकार का आलेख क्यो न हो हाशिये पर दिनाक लिख कर शुरू करता। क्रमश दिनाक लिखते जाना। जिस दिन पूरा हो उस दिन का दिनाक लिखना मेरी आदत का अग है। लेखन की श्रेणी मे आने वाली प्रत्येक इकाई का लेखा मेरे पास मौजूद है।

हॉं ! तो मै एक शैक्षिक यात्रा के लेखे की बात कर रहा था। यह काम काफी लम्बे अर्से तक चलने वाला था। कौन इतने लम्बे अर्से तक एक ही काम चलने देता है ! बीच–बीच मे दूसरी तरह के कई काम आये। कुछ को इच्छा से कुछ को अनिच्छा से कुछ को मजबूरी से निपटाये। एक काम लिखने का ही आ टपका। उसने शैक्षिक यात्रा पर रोक लगा दी।

मेरे एक पुराने मित्र पधारे। चोमू के रहने वाले। चोमू पूर्व जयपुर रियासत का एक महत्त्वपूर्ण ठिकाना। बडा प्रसिद्ध। प्रसिद्धि भी कई प्रकार से। श्री राव चोमू से जयपुर रहने लगे थे। उनका किसी काम से उदयपुर आना हुआ। वे मिलने घर आये। कहने लगे – मैं इस बार आपके लिए एक काम लाया हूँ। असल मे काम तो मेरा है । पर आपका भी उतना ही है। उन्होने मुझे बताया कि वे जयपुर मे एक मकान मे रहते हैं। मकान मालिक एक इजीनियर साहब हैं। बडे भले आदमी हैं। वे आपके समाज के हैं। ये चाहते हैं कि उनके पिताश्री पर एक स्मृति–ग्रथ प्रकाशित हो। उन्होने करीब साठ गणमान्य व्यक्तियो के आलेख एकत्रित किये। एक दिन वे मुझको कहने लगे कि इस ग्रन्थ का सम्पादन मैं करू। मैंने उनसे कहा – मुझसे यह काम नहीं होगा। इस पर वे कहने लगे – उस व्यक्ति को बतलाओ जिससे यह काम हो सकता है ! इस पर डा साहब मैने आपका नाम सुझाया। वे कहने लगे – मेरा उनसे परिचय नही है। आप ही राजी कीजिये। मैं उनको मुहमागा महनताना देने को तैयार हूँ।

अब डा साहब ! आप कहिये ? – मित्र ने प्रश्न किया।

मैने उत्तर दिया – देखिये ! साफ बात है। आपको सौपा काम है। आप न सही मैं करदूँ तो क्या फर्क पडेगा ? जिनका काम है वे मेरे समाज के हैं। उन्हे मैं नही जानता। अब जानूगा। स्मृति–ग्रन्थ के सपादन का काम उसका माध्यम बन कर आया है। यह अपने आप मे दुर्लभ अवसर है। जब तक उस पर काम करूगा उस व्यक्तित्व का सानिध्य रहेगा। भले वे किसी भी लोक मे हो। अत मैं यह सेवा करूगा नि शुल्क सेवा।

मित्र जयपुर लौट गये। उन्होंने सारे आलेख मुझ को भेज दिये। मैं स्मृति-ग्रंथ के सम्पादन मे लग गया। मेरी आदत है एक बार मे एक काम। अब मै लेखन के खाते म मात्र यही काम करने लगा। मैंने आलेखो को सरसरी तौर से देखा। उनके लिखने वालो को जाना। स्मृति-ग्रथ के मुख्य पात्र के जीवन परिचय को पढा। मुझे लगा कि मैं एक बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तित्व की यादो को ताजा कर रहा हूँ। सभी वर्गों के नागरिको को उन्होने प्रभावित किया था। जीवन की सार्थकता सिद्ध करने वाला कौनसा गुण ऐसा है जो इस व्यक्तित्व म समाहित नही था। ऐसे व्यक्ति के स्मृति-ग्रथ का सम्पादन सत्सग का एक माध्यम है। यह मुझे पहले याद नहीं था।

यो तो यह काम हल्का-फुल्का ही होता है। सामान्य भाषाई जानकार इसे कर सकता है। पर इसमे भी पारगति लाने के अवसरो की कमी नहीं। मैंने इस काम मे अच्छी मेहनत की। इस रचना के मुख्य तीन अश थे – सम्पादकीय जीवन परिचय और आलेख। सम्पादकीय म मैंने अनुसधान-विधा अपनाई। प्रकरण अध्ययन की तरह लिखा। अकित तथ्यो का आधार आलेखो को बनाया। तथ्यात्मक प्रत्येक वाक्य या वाक्य-समूह के अत मे आलेख सख्या लिखी। साहित्य और अनुसधान का योग बिठाया। जीवन परिचय को क्रम-बद्ध और रोचक बनाया। आलेखो की क्रमबद्धता व्यक्तित्व के गुणो के महत्वक्रम से निर्धारित की। इस प्रकार दो माह म दो सौ पृष्ठो की पाडुलिपि तैयार हुई । वह डाक से रवाना कर दी गई। यह था शकरलाल शर्मा स्मृति ग्रथ । यह मुद्रित होकर प्राप्त हुआ तब 132 पृष्ठ का था। मुद्रित होने और विमोचन तक आठ मास और लग गये। बाद मे शुरू और पहले समाप्त इस ग्रथ ने मेरे पुस्तक-रचना क्रम मे प्रथम स्थान हथिया लिया। जो सही था। किसी बडे काम को करते हुए बीच मे आने वाले छोटे-छोटे काम निपटाते जाना अच्छा होता है। इससे बडे काम मे देरी भले हो पर वह दुरुस्त होता है।

एक शैक्षिक यात्रा फिर चल पडी। जिस परिपाटी स शुरू की वह चल रही थी। किसी भी दिन जब लिखना शुरू करता गणपतिजी का आह्वान करता। फिर लिखता जाता। कहाँ तक पहुँचना है इसका आग्रह कभी नही। प्राथमिकता वाला कोई काम जब सामने नही होता तो मे लिखने लगता। जब लगता कि क्या करू ? तब मेरा आसन लिखने का सामान और लिखना शुरू। जब तक प्रथम पाच अध्याय पूरे नही हुए मैंने किसी को नही बताया। डर था काम हो न हो। पाचवा अध्याय पूरा हुआ। कुछ विश्वास जगा। मेरे मित्रो मे एक-एक रत्न है। प्रत्येक बिरला अपने करीने का एक। साहित्य मे पारगत एक डाराजेन्द्र शर्मा । वे एक दिन घर आये। अब तक का लिखा उनको सुनाया। उन्होने प्रशसा की प्रोत्साहित किया। अब तो वे जब-तब आते प्रगति

पूछते। मैं बताता नया लिखा – सुनाता। कभी–कभी वे खुद माग कर पढने लगते। यह विकल्प मुझे मुफीद था। मार्ग दर्शन मिलता। त्रुटियाँ दूर होतीं। एक–एक पडाव और एक–एक मजिल को पार करती शैक्षिक–यात्रा आखिरी पडाव पर आ पहुँची। यह पचास वर्ष की अवधि थी। प्रथम आलेख मे 484 पृष्ठ। भारी भरकम पाडुलिपि। दो वर्ष का समय लगा। वह भी तब जब अनवरत लेखन नहीं हुआ। कई अन्तराल आये। अन्य कई काम निपटाये।

मेरे दो और सेवानिवृत्त मित्र हैं। उनका मेरे यहाँ आना करीब–करीब नियमित। दोनो अध्ययन शील। नई–नई पुस्तके पढने के शौकीन। साहित्य के मर्मज्ञ। चिटठी–पत्री की बात छोडे पर लेखन की श्रेणी मे आने वाला प्रत्यक आलेख मैं उनको दिखाता। आज भी दिखाता हूँ। एक शैक्षिक यात्रा वे देखते। उस पर राय देते। सशोधन मे मदद करते।

मेरी यह पाडुलिपि कई हाथो मे गुजरी। मेरे एक और मित्र हैं। मूल रूप मे भूगोल के विशेषज्ञ। सरकारी नौकरी मे उनके साथ खूब काम किया। किन्ही विशेष अवधारणाओ पर उनकी पकड का मैं हमेशा से कायल रहा। एक दिन मैं उनके घर गया। पाडुलिपि उनको सौंप आया। उन्होने पढी। कहीं–कही पर सुझाव दिये। परन्तु अत मे लिखा – सत्यम् शिवम् सुन्दरम्

इन्हीं दिनो डा एल के ओड उदयपुर आये। वे बनस्थली (जयपुर) रहते थे। मेरे शिक्षा–गुरु थे। मैंने डाक्टरेट उनके ही मार्गदर्शन म किया था। वे जब–तब उदयपुर आते। मुझको भी इत्तला देते। मै मिलने जाता। कभी–कभी भोजन पर आमत्रित करता। इस बार भी आमत्रित किया। आज मध्यान्ह –भोजन था। बहुत देर तक बाते होती रही। सेवारत और सेवानिवृत्त की बात–चीत आखीर मे एक ही बिन्दु पर आकर टिकती है – समय कैसे कटता है ? डा ओड मेरी जीवन शैली को जानते थे। वे समझते थे कि मैं 'स्वरोजगार पर प्रयोग कर रहा हूँ। मेरे प्रयोग मे पात्र अन्य कोई नही स्वय मैं था। उन्होने पूछा – आपका प्रयोग कैसा चल रहा है ? मैंने तपाक स उत्तर दिया – सर ! अब तक मैं बात करता था। अब काम देख लीजिये।

मैंने एक शैक्षिक यात्रा की पाडुलिपि आगे बढा दी। पन्ने उलटने लगे। एक–एक दो–दो करके प्रथम से अतिम पृष्ठ तक जा पहुँचे। उनको पढने की कला मालूम थी। किस सामग्री को कब किस तरह पढना चाहिए इसमे वे दक्ष थे। दस मिनिट बाद बोले – कल रात्रि को मै स्वतत्र था। मेरे पास पढने को कुछ नही था। कल देते तो सारी पाडुलिपि पढ लेता। इस पर मैने कहा – आप इसको बनस्थली ले जाइये। तसल्ली से पढकर भेजिये। डाक–खर्च होगा तो होगा।

उन्होने सहमति व्यक्त की। वे उठ खडे हुए। चलते–चलते कहते गये – कमाल के आदमी हो। सेवानिवृत्त हुए दो वर्ष हुए और 484 पृष्ठ की पाडुलिपि लिखदी। इस कथन पर मुझे लगता कि मैं सही रास्ते पर चल रहा हूँ।

मैं सध्या को रेल्वे स्टेशन गया। पाडुलिपि दे आया।

लिखने का काम मैने हमेशा जिम्मेदारी से किया है। इस लिए पाडुलिपि से दूर होकर मैं हल्का महसूस करने लगा। अन्य काम मैं सहज भाव से करता हूँ। मैं उनमे लग गया। मेरी दिक्कत एक ही थी। आज भी है। लिखने के काम को ही मैं काम मानता हूँ। अन्य किसी काम को काम नहीं। मुझे महसूस होता कि मैं कुछ भी नही कर रहा हूँ। मैं अपने मन को बहुत समझाता – अगर तुमसे वायु सेवन मालिश आसन–व्यायाम और धारणा–ध्यान हो जाये तो मानलो कि सारा काम हो गया। यह सोच कर मत उलझो कि काम नही किया। पर मन ही तो है। मानता ही नही। वह टस से मस नहीं। उसका मानना है कि तुम जो कुछ लिखते हो वही तो तुम्हारी राज्य सेवा का विकल्प है। वही तो तुम्हारा मौलिक है। और तो सब सामान्य है। सामान्य चर्या मैं पूरे मनोयोग से निभाता। लिखने का समय मैं पढने मे लगाता। अच्छी बाते डायरी मे लिखता पर उधेड–बुन मात्र एक – मौलिक लेख या रचना अब क्या हो ? परन्तु एक सकट आ खडा हुआ।

सकट गहन था। मेरी मातु श्री बीमार हुई। बीमारी बढती गई। घर के सब सदस्य चिंतित। चिकित्सालय मे भर्ती कराया। दो मास वहॉ इलाज हुआ। लाभ भी हुआ। परन्तु वे बच न सकी। उनकी मेरे नाम एक आज्ञा थी। स्वर्गवासी होने के तीन–चार दिन पूर्व उन्होने मेरे पुत्र को कहा था। तेरे बाबूजी को कहना – मेरा श्राद्ध 'गया मे करे। मैं स्वय इस समय प्रथम सकटकालिक अवधि से गुजर रहा था। मातु श्री के स्वर्गवासी होने से मै हरावल मे आगया। मुझे जल्दी से जल्दी आज्ञाकारी पुत्र प्रमाणित करने की चिंता लगी। उनको तीन मास होते ही मैं यात्रा पर निकल पडा। हम छ सदस्य थे। उदयपुर से गया पुरी कलकत्ता पटना वाराणसी इलाहाबाद लखनऊ होते हुए दिल्ली लौटे। वहॉ दो दिन ठहरे। नई सडक गये। वहाँ मेरे प्रकाशक 'यगमैन एण्ड कम्पनी की दूकान है। कम्पनी के मालिक से मिला। उनके लिए मैने कई पुस्तके लिखी। वे शिक्षक प्रशिक्षण पर थी। प्रशिक्षण का स्वरूप बदला। मौलिक पुस्तको मे प्रशिक्षणार्थियो की रुचि घटी। बाजार मे नोटस का प्राचुर्य हुआ। प्रकाशको को सस्ते लेखक मिलने लगे। मेरी पुस्तको का प्रचलन समाप्त हो गया। प्रकाशक चाहते थे कि मेरी एक पुस्तक उनके पास अब भी हो। मुझे काम चाहिए था। मैने स्वीकति दी। यह तय रहा कि पुस्तक का नाम विषय आदि बाद मे भेजूँगा। हम दिल्ली से रवाना हुए। सीधे

उदयपुर पहुँचे। यात्रा सानद पूरी हुई। कुल बीस दिन लगे। मातु श्री की आज्ञा का पालन हुआ। मुझे दिली खुशी थी। दो दिन बाद दिवाली थी। दिवाली अब भी आगतुक–दिवस होता था। घर पर अच्छा खासा मजमा जम जाता। वैसी ही तैयारी घर पर भी होती थी। मै सेवानिवृत्त था। तीसरा वर्ष पूरा होने जा रहा था। अब भी उतने ही लोग स्नेह करते थे। शिक्षा विभाग भी मुझे जब तब याद करता था। मै कई समितियो का सदस्य था। मेरी व्यस्तता म कमी नही थी। फिर भी एक बात खलती थी। मौलिक ग्रथ रचना का काम रुका पडा था। एक शैक्षिक यात्रा की पाडुलिपि मे सशोधन सम्पादन बाकी था। पर वह तो अन्यो के हाथ था। इस बीच मैं क्या करूँ ? यही एक प्रश्न था। इस प्रश्न का भी समाधान हुआ।

मैंने सेवा निवृत्ति के दस वर्ष पूर्व पीएच डी की थी। तब थीसिस अग्रेजी मे लिखते थे। प्रकाशक कठिनाई से मिलते थे। एक को अनुनय–विनय करके राजी भी किया। पर काम आधे मे रुक गया। फिर आगे न बढा । मैं उसी थीसिस को सक्षिप्त स्वरूप देने लगा। यह कार्य मैं हिन्दी लिपि मे करने लगा। अब मै फिर स व्यस्त था। मैं अपनी पूर्व लखन शैली स इस काम का भी करता। इस बार ज्यादा समय नही लगा। प्रथम आलेख तीन मास मे तैयार हुआ। इस रचना का नाम था मानवीय सम्बन्ध और विद्यालयी व्यवस्था ।

प्रथम आलेख को मैंने खुद ने सुधारा – सवारा। इसको अपने मित्रो को पढवाया। इसका सशोधन – सधान मेरे गुरु डा एल के ओड से करवाया। इस प्रक्रिया मे चार मास और लग गये। इस अवधि मे लेखनेतर सारी प्रवत्तियॉ सहज रूप से चलती रही। इस दृष्टि से यह अवधि भी कम है। अततोगत्वा मैंने पाडुलिपि दिल्ली रवाना कर दी। मेरे वही पुराने प्रकाशक जिनको एक रचना भेजने का वादा कर चुका था।

एक शैक्षिक यात्रा की अब बारी थी। डा ओड ने उसको देख लिया था। इस रचना का विचार मेरा भले था। पर प्रेरणा–प्रोत्साहन डा राजेन्द्र शर्मा का था। वे राजस्थान हिन्दी साहित्य अकादमी मे सचिव थे। वे कहा करते थे मुझे आपमे साहित्यकार नजर आता है। नौकरी मे आपने शिक्षाविद् के रूप मे नाम कमाया। सेवानिवृत्ति मे आपके अन्तर के साहित्यकार को जाग्रत करना है। मुझको यह बात बहकावा लगती। पर बहकावे ही बहकावे मे मैंने पुस्तक लिख दी। यो तो डा राजेन्द्र शर्मा ने पाडुलिपि थोडी–थोडी कभी–कभी देखी थी। परन्तु उसके सम्पादन का जिम्मा मैने उनको सौपा हुआ था। आखिर वह काम भी शुरू हुआ। मै प्रात 9 00 बजे उनके घर जाता। हम इस कार्य को रोजाना बारह बजे तक करते। चार–पाच दिन हुए होगे कि एक दिन वे कहने लगे – अब आप कष्ट न कीजिये मैं अकेला ही इस काम को कर दूँगा। मैंने पूछा – ऐसी क्या बात

है ? पहले साथ–साथ काम करने की बात थी अब आप कहते हैं अकेला कर दूँगा। पहले तो मुस्कुराये फिर बोले – शर्माजी ! साहित्यकार बडा दुर्गम्य होता है। पैरा और वाक्य तो क्या एक–एक शब्द के लिए अडता है। उसके लिखे की कभी काट–छाट की हो तो आप जाने ! एक आप हैं जो कुछ बोलते ही नहीं इतने दिन हो गये। अब फिर आपको बुलाने मे क्या तुक है। मैंने कहा – जब आपको सम्पादन का जिम्मा सौंप दिया तो फिर बहस से क्या लाभ। आप स्थापित साहित्यकार हैं। मैंने ऐसा बडा काम पहली बार किया है। अत शेष सब आपको ही करना है। मेरी छुट्टी हो गई।

शायद एक सप्ताह के बाद मैं डा राजेन्द्र शर्मा के घर गया। उन्होने कहा – आपका काम हो चुका। मैंने पाडुलिपि देखी। उसके 484 पृष्ठ अब कट छट कर 365 रह गये थे। डा शर्मा ने कहा – अब यह बहुत अच्छी है। अब इसके लिए प्रस्तावना लिखिए। मैने प्रस्तावना लिख ली थी। उसको उनके सामने रख दी। वे पढने लगे। सारी पढ गये। उन्होने कहा – यह प्रस्तावना शिक्षाविद् की है। इसे साहित्यकार की बनाना होगा। मैं बना दूँगा। कल आइये।

मै दूसरे दिन पहुँचा। प्रस्तावना तैयार थी। मैंने उसको ध्यान से पढा। इसलिए भी कि यह मेरी ओर से लिखी गई थी। मेरे अन्तर के साहित्यकार को भी अच्छी लगी। मैंने कृतज्ञ भाव से डा शर्मा की ओर देखा। वे कहने लगे – अभी बहुत कुछ बाकी है शर्माजी ! पहला काम तो यही है कि आप प्रकाशक तलाशिये।

मैं प्रकाशक की खोज मे लग गया। मेरी कई पुस्तके प्रकाशित हुई थीं। मेरा लेखक के रूप मे रुतबा था। पर वह रुतबा इस बार काम नही आया। साहित्यिक पुस्तको के प्रकाशक कहते – यह तो एक शैषिक यात्रा है। हम शिक्षा के क्षेत्र की पुस्तके नही छापते। शैक्षिक प्रकाशको से सम्पर्क साधा। उनका प्रश्न था – इसके पाठक किस स्तर या कक्षा के विद्यार्थी होगे ?

में किसको क्या उत्तर दूँ – यह मेरी समस्या थी। मै विद्वानो से बहस कर सकता था। उनको अपनी बात पर कायल करना मुझे खूब आता था। पर लक्ष्मीपुत्रो को मै इस पुस्तक के प्रकाशन पर राजी नहीं कर सका। मै किसी अन्य विकल्प की तलाश करने लगा। मित्रो को समस्या बतलाई। तय रहा कि राजस्थान साहित्य अकादमी (उदयपुर) को प्रकाशन सहायता हेतु निवेदन करना चाहिए। वह भी किया गया। पर सफलता नही मिली। आखिर तय रहा कि खुद को ही प्रकाशित करना चाहिए। इसके लिए सहकार प्रकाशन का गठन करना पडा।

सहकार प्रकाशन गतिशील हुआ। पुस्तक के प्रकाशन के लिए मुद्रको से पत्र व्यवहार हुआ। मुझको और मेरे एक मित्र को अजमेर एक बैठक मे जाना पडा। यह बैठक माध्यमिक शिक्षा बार्ड राजस्थान अजमेर म आयाजित थी। तब माध्यमिक स्तर पर वैकल्पिक विषयो का प्रचलन था। वैकल्पिक विषय भूगोल मे दो प्रश्न पत्र होते थे। हमको माध्यमिक भूगोल प्रथम भाग का लेखक नियुक्त किया गया। इस भाग मे भौतिक भूगोल के सिद्धान्तो को स्थान दिया गया था। मेरी एक शैक्षिक यात्रा कभी की पूरी हो चुकी थी। अब मैं अपने मित्र के साथ इस पुस्तक क लेखन–कार्य म जुट गया। इस काय म पाच–छ माह लगे। मार्च सन् 1984 मे इस पुस्तक की पाडुलिपि बोर्ड को सौप दी। बोर्ड ने उसी वर्ष उसे प्रकाशित कर दी। हमारा पारिश्रमिक हमको प्राप्त हुआ। वह भी एक मुश्त। कितना सुखद अनुभव !

इसके पूर्व ही एक सुयोग हुआ। आचार्य तुलसी का भीलवाडा मे चातुर्मास था। उसमे कई भव्य आयोजन थे। उनमे एक आयोजन शैक्षिक था। उद्देश्य था – विद्यार्थियो मे जीवन मूल्यो की प्रतिष्ठा करना । विज्ञान और तकनीकी के विकास के बावजूद जीवन मूल्यो के ह्रास से आचार्य तुलसी चिंतित थे। इस समस्या के समाधान के लिए उनकी एक मौलिक योजना थी। उस पर अनुसधानकार्य तत्कालीन युवाचार्य महाप्रज्ञ ने किया था। युवाचार्य महाप्रज्ञ अब तेरा पथ सम्प्रदाय के आचार्य हैं। उनके अनुसधान के अनुसार एक नये विषय का उद्भव हुआ। विषय का नाम रखा गया – जीवन विज्ञान । वहा भीलवाडा मे ही शिक्षाधिकारियो की एक सगोष्ठी आयोजित थी। मुझे भी निमत्रण मिला। आचाय तुलसी ने मुझ आग्रह पूर्वक बुलाया था। मे वहा पहुँचा।

इस अवसर पर जीवन विज्ञान पर प्रशिक्षण शिविर था। हम लोग उसमे शामिल हुए। शिविर के अनुभवो को दृष्टि मे रखकर पाठयक्रम का निर्माण किया गया। पुस्तक लेखन की योजना भी वहीं तैयार की गई। लेखन–कार्य मे सयोजन और लखन दा दायित्व मुझ सौंपे गय। मैने इनको निभाया। कक्षा छ से आठ तक के लेखन कार्य का सयोजन किया। कक्षा आठ की पुस्तक के लेखन मे भागीदारी निभाई। न्यूनाधिक रूप से यह कार्य तीन वर्ष तक चला। मेरी भागीदारी से लिखी गई पुस्तक का सन् 1987 मे प्रकाशन हुआ।

मुझे बडी प्रसन्नता रही कि मैं आचार्य श्री तुलसी की अपेक्षाए पूरी कर सका।

इधर 'सहकार प्रकाशन भी रग लाया। इसके बेनर तले एक शैक्षिक यात्रा प्रकाशित हुई। इसका प्रकाशन वर्ष सन 1983 था। इस पुस्तक का लेखन शुरु करने और प्रकाशन तक पाच वर्ष लग गये। इस अवधि से कोई

शिकवा–शिकायत नही। पर प्रकाशन पर एक मुश्त खर्चा करना एक–एक या अधिसख्य पुस्तके क्षेत्र मे बिखेर देना एक–एक की राशि को वापस इकट्ठा करना और वह भी मुझ जैसे व्यक्ति के द्वारा जो ऐसे काम का अभ्यस्त नही। इस प्रकार धन–सग्रह कितना मुश्किल इसका अन्दाजा तो कोई भुक्त–भोगी ही लगा सकता है । परन्तु ऐसा करने का मलाल भी खत्म हुआ जब मैं मार्च 1985 मे पुरस्कृत हुआ। हिन्दी साहित्य अकादमी राजस्थान ने मुझे कन्हैयालाल सहल पुरस्कार से सम्मानित किया। यह पुरस्कार 'सस्मरण विधा' से लिखी रचना पर देय होता है। इस पुरस्कार मे प्राप्त राशि ने सहकार प्रकाशन के घाटे को बराबर कर दिया। परन्तु सन् 1983 मे प्रकाशित इस रचना की चार सौ प्रतियाँ सन् 1991 तक बची पडी थीं। इनसे मैं ज्यो–त्यो मुक्ति चाहता था।

मैं किसी काम से जयपुर गया। वहाँ मेरे एक पुस्तक प्रकाशक मित्र थे। उनसे भी मिलना हुआ। एक शैक्षिक यात्रा के प्रकाशन को अब आठ वर्ष हो चुके थे। वह अब मेरे लिए समस्या थी। न बिकी तो उसके खाद हो जाने का भय था। मैंने प्रकाशक मित्र से कहा मेरे पास अब भी 'एक शैक्षिक यात्रा' की चार सौ प्रतियाँ हैं। यह पुरस्कृत पुस्तक है। मास्को अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तक मेला (10–15 सितम्बर 1985) मे प्रदर्शित 550 पुस्तको मे एक यह भी थी। इसे मैं आपको सौंपना चाहता हूँ। वह भी आपकी शर्तों पर। मेरी कोई शर्त नहीं।

मुझे प्रकाशक ने उत्तर दिया – मुझको आपका प्रस्ताव मजूर है। मैं पूरी कोशिश करूगा। और मैंने वे प्रतियाँ उनके पास भिजवा दी। मैं प्रकाशक के बाने से मुक्त हुआ। अब मै वापस अपने पूर्व बाने मे था। वह है एक लेखक का बाना।

वैसे मैं राज्य सेवा के अतिम वर्षों प्रशासनिक पदो पर रहा। परन्तु बारह वर्ष मने अनुसधान का काम किया था। मेरी खाजू दृष्टि जीवन्त रही। आज भी है। माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान मे सचिव के पद पर रहते मेरे मन मे एक प्रश्न पैदा हुआ – बोर्ड परीक्षा मे मेरिट प्राप्त छात्र छात्राओ की मेरिट–प्राप्ति का सर्वाधिक श्रेय किसको ? मुझे उत्तर तलाशना था। इस प्रश्न का सटीक उत्तर मेरिट प्राप्त करने वाले ही दे सकते थे। मैने उनके लिए एक प्रश्नावली तैयार की। उसमे दो बाते मुख्य थी। आप अपनी मेरिट–प्राप्ति का सर्वाधिक श्रेय किसको देते हैं और क्यो ? ऐसे प्रत्येक छात्र–छात्रा को प्रश्नावली भेजी गई। उत्तर दन का एक प्रारूप और टिकिट लगा लिफाफा भेजा गया। अधिकाश ने उत्तर भेजे। उन्होने अपने स्वतत्र विचार अकित किये। इन उत्तरो ने मेरा उत्साह बढाया। फिर क्या था। मैं इस प्रक्रिया को दुहराने लगा। परीक्षा परिणाम घोषित होते ही मैं ऐसा करता। सात वर्ष तक ऐसा करता रहा। अपनी रचना को वैध एव मानक बनाने के लिए यह जरूरी था। इस प्रकार एकत्रित उत्तर मैंने सुरक्षित रख छोड थ।

सोचना था – कभी कोई अच्छा काम होता होगा तो होगा। जब लेखनेतर प्रवृत्तियो से फुरसत मिलती तो उनको पढता। मैने देखा कि अभिभावक वर्ग को श्रेय देने वालो का प्रतिशत 15 है। अध्यापक और स्कूल को श्रेय देने वाले 20 प्रतिशत हैं। सबसे बडी संख्या 65 प्रतिशत छात्र–छात्रा वे थे जिन्होने कहा – इस उपलब्धि का श्रेय हमे ही है सब कोई सब कुछ करते और हम सब कुछ न करते तो मेरिट कहाँ से मिलती !

मैंने तीन पुस्तके लिखना तय किया। सबसे पहले लिखी अभिभावको के लिए। नाम रखा आपके बच्चे मेरिट कैसे प्राप्त करे ? उसके पश्चात् लिखी अध्यापक और स्कूल के लिए। उसका नाम रखा मेरिट के विकास मे अध्यापक और स्कूल की भूमिका । प्रथम का प्रकाशन सन् 1988 में हुआ। द्वितीय का प्रकाशन प्रथम के आठ वर्ष बाद 1996 मे हुआ। तीसरी पुस्तक का नाम है विद्यार्थियो की मेरिट प्राप्ति के सूत्र। उसका प्रकाशन अभी बाकी है।

इस युग मे लिखना आसान है। किसी पुस्तक की पाडुलिपि तो एक 'कुवारी कन्या' की तरह होती है। प्रकाशन पर वह 'सौभाग्यवती' बनती है। जब लेखक को उसकी रायल्टी मिलने लगती है तो वह 'कमाऊ' बन जाती है। ऐसा भाग्य बडा मुश्किल। फिर भी मेरा भाग्य कुछ–कुछ ऐसा है। थोडी–थोडी ही सही पर जमा बन्दी होती है। होती रही है। होती रहने का विश्वास है। परन्तु अच्छी पुस्तक से यशकीर्ति मे वृद्धि होती है । असली लाभ वही है।

पुस्तक लेखन का तो मोटा–मोटा यही लेखा है। अलबत्ता इसमे 'पलको मे बन्द पल' का जोड लगाना बाकी है। इसके अलावा कई लेख लिखे। वे प्रकाशित हुए। कई वार्ताएँ लिखीं। वे आकाशवाणी पर प्रसारित हुईं। कई सभाओ सम्मेलनों सगोष्ठियो और कार्यशालाओ मे भाषण दिये। आज भी देता हूँ। ये छोटे–छोटे काम मैं ज्यादा अच्छे मानता हूँ। इनकी गिनती मेरे पास नही। परन्तु वजन है। इस युग मे बस्ते के बोझ की बात चलती है। तो मैं भी कहना चाहता हूँ कि मेरी इन छोटी–छोटी रचनाओ के बस्ते का बोझ साढे चार किलो है। पर एक हैरतअगेज बात – इनसे मुझको जो आर्थिक लाभ होता है वह पुस्तक–लेखन से मिलने वाले लाभ से कई गुना ज्यादा होता है।

बस यही मेरे लेखन का लेखा है।

पाठक यह तो समझते ही हैं कि यह आज अभी तक का ही है। बहुत कुछ शेष है और अब आगे ।

शिकवा–शिकायत नहीं। पर प्रकाशन पर एक मुश्त खर्चा करन
या अधिसख्य पुस्तके क्षेत्र मे बिखेर देना एक–एक की राशि का ए
करना और वह भी मुझ जैसे व्यक्ति के द्वारा जो ऐसे काम का अभ्यर
प्रकार धन–सग्रह कितना मुश्किल इसका अन्दाजा तो कोई भुक्त–
सकता है । परन्तु ऐसा करने का मलाल भी खत्म हुआ जब मैं
पुरस्कृत हुआ। हिन्दी साहित्य अकादमी राजस्थान ने मुझे कन्हैय
पुरस्कार से सम्मानित किया। यह पुरस्कार 'सस्मरण विधा' से लिए
देय होता है। इस पुरस्कार मे प्राप्त राशि ने सहकार प्रकाशन
बराबर कर दिया। परन्तु सन् 1983 मे प्रकाशित इस रचना की चा
सन 1991 तक बची पडी थीं। इनसे मैं ज्यो–त्यो मुक्ति चाहता था

मै किसी काम से जयपुर गया। वहाँ मेरे एक पुस्तक प्रका
उनसे भी मिलना हुआ। एक शैक्षिक यात्रा के प्रकाशन को अ
चुके थे। वह अब मेरे लिए समस्या थी। न बिकी तो उसके खाद ह
था। मैने प्रकाशक मित्र से कहा मेरे पास अब भी एक शैक्षिक र
सौ प्रतियाँ हैं। यह पुरस्कृत पुस्तक है। मास्को अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तक
सितम्बर 1985) मे प्रदर्शित 550 पुस्तको मे एक यह भी थी।
सौंपना चाहता हूँ। वह भी आपकी शर्तो पर। मेरी कोई शर्त नहीं

मुझे प्रकाशक ने उत्तर दिया — मुझको आपका प्रस्ताव
कोशिश करूगा। और मैने वे प्रतियाँ उनके पास भिजवा दी। मैं
से मुक्त हुआ। अब मैं वापस अपने पूर्व बाने मे था। वह है एक

वैसे मैं राज्य सेवा के अतिम वर्षों प्रशासनिक पदो पर र
वर्ष मैने अनुसधान का काम किया था। मेरी खोजू दृष्टि जीवन्त
है। माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान मे सचिव के पद पर रहते मेरे
पैदा हुआ — बोर्ड परीक्षा मे मेरिट प्राप्त छात्र छात्राओ की
सर्वाधिक श्रेय किसको ? मुझे उत्तर तलाशना था। इस प्रश्न क
मेरिट प्राप्त करने वाले ही दे सकते थे। मैंने उनके लिए एक प्रश्नाव
उसमे दो बात मुख्य थी। आप अपनी मेरिट–प्राप्ति का सर्वाधिक श्रेय
हैं और क्यो ? ऐसे प्रत्येक छात्र–छात्रा को प्रश्नावली भेजी गई। उ
एक प्रारूप और टिकिट लगा लिफाफा भेजा गया। अधिकाश ने उ
उन्होने अपने स्वतत्र विचार अकित किये। इन उत्तरो ने मेरा उत्साह बढाय
क्या था। मै इस प्रक्रिया को दुहराने लगा। परीक्षा परिणाम घोषित होते ही मैं
करता। सात वर्ष तक ऐसा करता रहा। अपनी रचना को वैध एव मानक ब
के लिए यह जरूरी था। इस प्रकार एकत्रित उत्तर मैने सुरक्षित रख छोडे

बची भी रही। उनमे डायरी लिखना भी एक है। आदत मानव की
। डायरी लिखना मेरी आदत बन गया था। अब भी एक जेबी
। ठीक वैसी जैसी कि नौकरी में खरीदता था। एक टेबिल–डायरी
थी वैसी अब भी है। शुभेच्छु मित्र लाते हैं। वे जिनको कई
हैं। वे मुझे भेट कर जाते हैं। मेरा डायरी लिखना
साल की एक एक–एक जेबी डायरी। हर साल की ही
। दो अलमारियो मे दोनो सजी–धजी सुरक्षित हैं। मेरा
का इतिहास कहने का मन होता है। इतिहास है भी।
से आज तक का इतिवृत्त इनमे भरा पडा है।

से लिखता हूँ। प्रो जे पी नायक को शिक्षा के क्षेत्र
ही शिक्षा आयोग (1964–66) के सदस्य सचिव थे।
सम्मेलन मे भाषण था। मैं भी उसमे उपस्थित था।
के स्रोतो का जिक्र कर रहे थे। उसी प्रसग मे उन्होने
का नाम लेकर बताया कि वे नियमित रूप से
मे वे छोटी–छोटी बाते भी लिखते। जैसे इतना गेहूँ
इतनी दाल लाया। इतनी–इतनी कीमत चुकाई।
के इतने पैसे चुकाये। इनकी सफाई के नौकरानी
के लिए इतना पैसा चुकाया। ऐसे ही घर मे की
का वह व्यक्ति विस्तृत विवरण लिखता। प्रो जे पी
पूर्व के भाव–ताव का उस व्यक्ति की डायरियाँ ही
मात्र एक मौलिक स्रोत है।

यह मैं इसी भाषण से समझा। सरकारी सेवा
सम्बन्धी बाते लिखता था। बाद मे डायरी मे

र्य का विस्तृत विवरण लिखता। किसी मित्र
को के नाम और आने के उद्देश्य लिखता।
भी हो। विदेश की हो देश की हो
की हो घर की हो – मैं डायरी
शादी ब्याह जन्म हारी–बीमारी
होता अवश्य लिखता। मेरा सवेरा
पाठ से शुरू होता। इस वर्णन
कारण से इनमे से किसी प्रवृत्ति
ाता। रात्रि–विश्राम के पूर्व

10

डायरी का दायरा

मेरे लेखन का एक आयाम और भी है। मैं डायरी लिखता हूँ। डायरी लिखना मैंने शुरू नहीं किया। वह तो शुरू करवाया गया था। जब मैं मास्टर बना। पचपन वर्ष पहले की बात है। मुझे स्कूल मे एक डायरी मिली। वह शिक्षक डायरी थी। शिक्षा विभाग ने इसे लागू किया हुआ था। सभी अध्यापक लिखते थे।

इस डायरी मे मुझे मेरी कक्षाओ को पढाने के विषयो का पूरा ब्यारा लिखना पडता। सत्र भर का ब्योरा उसका उपसत्रवार विभाजन फिर मासिक और अत मे सप्ताहवार विभाजन। उसमे अध्यापकी से सम्बन्धित सभी कर्तृत्व लिखता। बडा मुश्किल काम। मेरे लिए ही नही अन्य अध्यापका के लिए भी। लिखते–लिखते डायरी लिखना आ गया। यह समझ भी पैदा हुई कि डायरी भरी होना जरूरी है। भरी हुई डायरी की प्रधानाध्यापक जी की टेबिल पर पहुँच जरूरी है। प्रति सप्ताह सोमवार को। बस। बस इतना ही।

ऐसी डायरी मैने 12 वर्ष तक भरी। फिर मेरी पदोन्नति हो गई। मैं हेडमास्टर बन गया। मरा उस डायरी से पीछा छूटा। अब एक नई डायरी से पल्ला पडा। नाम था 'लॉग बुक। लॉग बुक का शाब्दिक अर्थ है – रोजनामचा यात्रा–दैनिकी या कार्य–पजिका। लॉग बुक सस्था का एक गोपनीय दस्तावेज होता था। 'एजूकेशन कोड मे निर्देश था। प्रत्येक प्रधानाध्यापक लॉग बुक का सधारण करेगा। उसमे विद्यालय सचालन सम्बन्धी सामान्य आर विशेष घटनाओ को प्रतिदिन लिखेगा। उसके आलेख आवश्यकता पडने पर साक्ष्य के रूप मे माने जायेगे। जब तक प्रधानाध्यापक रहा लॉग बुक भरता। फिर और ऊचा अधिकारी बन गया। लॉग बुक भरना भी बन्द।

अब एक की बजाय दो–दो डायरियाँ रखता। अपनी खुद की इच्छा से। एक जेबी डायरी। वह ऐसी खरीदता कि उसके आवरण मे धन रखने को एक बटुआ भी हो। दूसरी टेबिल डायरी। भारी–भरकम। प्रतिदिन के लिए पूरा एक पृष्ठ होना जरूरी था। किसी भी दिन – खुद करने के काम आफिस से लेने क काम ऊपर से बताये हुए काम की अनुपालना यात्रा का ब्यौरा आदि–आदि। खुद की सावचेती के लिए यह सब करना जरूरी था। उच्च अधिकारियो के सामने किकर्तव्यविमूढ न होना पडे इस लिए और भी जरूरी। नौकरी तो नौकरी होती है। वह दी जाती है। एक निश्चित समय सीमा पर वह ले ली जाती है। दूसरे को दे दी जाती है। मैं भी नौकरी से निवृत्त हुआ। नौकरी की अनेक बाते छूट गईं।

परन्तु अनेक बची भी रही। उनमे डायरी लिखना भी एक है। आदत मानव की दूसरी प्रकृति है। डायरी लिखना मेरी आदत बन गया था। अब भी एक जेबी डायरी खरीदता हूँ। ठीक वैसी जैसी कि नौकरी मे खरीदता था। एक टेबिल–डायरी भी। जैसी पहले होती थी वैसी अब भी है। शुभेच्छु मित्र लाते है। वे जिनको कई ऐसी डायरियाँ भेट होती हैं। वे मुझे भेट कर जाते हैं। मेरा डायरी लिखना अनवरत चालू है। हर साल की एक एक–एक जेबी डायरी। हर साल की ही एक–एक टेबिल डायरी। दो अलमारियो मे दोनो सजी–धजी सुरक्षित हैं। मेरा उनको मेरे सेवानिवृत्त जीवन का इतिहास कहने का मन होता है। इतिहास है भी। सेवानिवृत्ति के प्रथम दिवस से आज तक का इतिवृत्त इनमे भरा पडा है।

मैं डायरी पूरे मनोयोग से लिखता हूँ। प्रो जे पी नायक को शिक्षा के क्षेत्र का कौन नही जानता। वे ही शिक्षा आयोग (1964–66) के सदस्य सचिव थे। उनका एक अखिल भारतीय सम्मेलन मे भाषण था। मैं भी उसमे उपस्थित था। वे अपने भाषण मे अनुसधान के स्रोतो का जिक्र कर रहे थे। उसी प्रसग मे उन्होने दक्षिणी भारत के एक महानुभाव का नाम लेकर बताया कि वे नियमित रूप से डायरी लिखते थे। डायरी मे वे छोटी–छोटी बाते भी लिखते। जैसे इतना गेहूँ लाया इतना चावल लाया इतनी दाल लाया। इतनी–इतनी कीमत चुकाई। मडी से घर लाने की मजदूरी के इतने पैसे चुकाये। इनकी सफाई के नौकरानी को इतने पैसे दिये। गेहूँ पिसाई के लिए इतना पैसा चुकाया। ऐसे ही घर मे की गइ प्रत्यक खरीद–फरोक्त का वह व्यक्ति विस्तृत विवरण लिखता। प्रो जे पी नायक ने कहा कि स्वतत्रता के पूर्व के भाव–ताव का उस व्यक्ति की डायरियाँ ही भारत सरकार के पास आज मात्र एक मौलिक स्रोत है।

डायरी का इतना महत्व यह मै इसी भाषण से समझा। सरकारी सेवा तक मैं डायरी मे ज्यादातर नौकरी सम्बन्धी बाते लिखता था। बाद मे डायरी मे लिखने की बाते बदल गईं।

शुरूआती दिनो मे मैं घरू खर्च का विस्तत विवरण लिखता। किसी मित्र से मिलने जाता वह भी लिखता। आगन्तुको के नाम और आने के उद्देश्य लिखता। महत्त्वपूर्ण घटनाओ को लिखता। कही की भी हो। विदेश की हो देश की हो राज्य की हो मेरे नगर की हो पास पडौस की हो घर की हो – मै डायरी मे लिख डालता। पास–पडौस की घटनाओ मे शादी ब्याह जन्म हारी–बीमारी मरण या जो भी कायक्रम जिसम में शामिल हाता अवश्य लिखता। मेरा सवेरा वायुसेवन देवदर्शन आसन व्यायाम और पूजापाठ से शुरू होता। इस वर्णन से प्रत्येक पृष्ठ को शुरू करता। किसी दिन किसी कारण से इनमे से किसी प्रवृत्ति मे चूक हो जाती तो यह भी डायरी मे लिखा जाता। रात्रि–विश्राम के पूर्व

10

डायरी का दायरा

मेरे लेखन का एक आयाम और भी है। मैं डायरी लिखता हूँ। डायरी लिखना मैने शुरू नही किया। वह तो शुरू करवाया गया था। जब मैं मास्टर बना। पचपन वर्ष पहले की बात है। मुझे स्कूल मे एक डायरी मिली। वह शिक्षक डायरी थी। शिक्षा विभाग ने इसे लागू किया हुआ था। सभी अध्यापक लिखते थे।

इस डायरी मे मुझे मेरी कक्षाओ को पढाने के विषयो का पूरा ब्योरा लिखना पडता। सत्र भर का ब्योरा उसका उपसत्रवार विभाजन फिर मासिक और अत मे सप्ताहवार विभाजन। उसमे अध्यापकी से सम्बन्धित सभी कर्तृत्व लिखता। बड़ा मुश्किल काम। मेरे लिए ही नही अन्य अध्यापको के लिए भी। लिखते–लिखते डायरी लिखना आ गया। यह समझ भी पैदा हुई कि डायरी भरी होना जरूरी है। भरी हुई डायरी की प्रधानाध्यापक जी की टेबिल पर पहुँच जरूरी है। प्रति सप्ताह सोमवार को। बस। बस इतना ही।

ऐसी डायरी मैने 12 वर्ष तक भरी। फिर मेरी पदोन्नति हो गई। मैं हेडमास्टर बन गया। मेरा उस डायरी से पीछा छूटा। अब एक नई डायरी से पल्ला पड़ा। नाम था 'लॉग बुक'। लॉग बुक का शाब्दिक अर्थ है – रोजनामचा यात्रा–दैनिकी या कार्य–पजिका। लॉग बुक सस्था का एक गोपनीय दस्तावेज होता था। 'एजूकेशन कोड' मे निर्देश था। प्रत्येक प्रधानाध्यापक लॉग बुक का सधारण करेगा। उसमे विद्यालय सचालन सम्बन्धी सामान्य और विशेष घटनाओ को प्रतिदिन लिखेगा। उसके आलेख आवश्यकता पडने पर साक्ष्य के रूप मे माने जायेगे। जब तक प्रधानाध्यापक रहा लॉग बुक भरता। फिर ओर ऊचा अधिकारी बन गया। लॉग बुक भरना भी बन्द।

अब एक की बजाय दो–दो डायरियाँ रखता। अपनी खुद की इच्छा से। एक जेबी डायरी। वह ऐसी खरीदता कि उसके आवरण मे धन रखने को एक बटुआ भी हो। दूसरी टेबिल डायरी। भारी–भरकम। प्रतिदिन के लिए पूरा एक पृष्ठ होना जरूरी था। किसी भी दिन – खुद करने के काम आफिस से लेने के काम ऊपर से बताये हुए काम की अनुपालना यात्रा का ब्योरा आदि–आदि। खुद की सावचेती के लिए यह सब करना जरूरी था। उच्च अधिकारियो के सामने किंकर्तव्यविमूढ न होना पडे इस लिए और भी जरूरी। नौकरी तो नौकरी होती है। वह दी जाती है। एक निश्चित समय सीमा पर वह ले ली जाती है। दूसरे को दे दी जाती है। मै भी नौकरी से निवृत्त हुआ। नौकरी की अनेक बाते छूट गईं।

परन्तु अनेक बची भी रही। उनमे डायरी लिखना भी एक है। आदत मानव की दूसरी प्रकृति है। डायरी लिखना मेरी आदत बन गया था। अब भी एक जेबी डायरी खरीदता हूँ। ठीक वैसी जैसी कि नौकरी मे खरीदता था। एक टेबिल–डायरी भी। जैसी पहले होती थी वैसी अब भी है। शुभेच्छु मित्र लाते हैं। वे जिनको कई ऐसी डायरियाँ भेट होती हैं। वे मुझे भेट कर जाते हैं। मेरा डायरी लिखना अनवरत चालू है। हर साल की एक एक–एक जेबी डायरी। हर साल की ही एक–एक टेबिल डायरी। दो अलमारियो मे दोनो सजी–धजी सुरक्षित हैं। मेरा उनको मेरे सेवानिवृत्त जीवन का इतिहास कहने का मन होता है। इतिहास है भी। सेवानिवृत्ति के प्रथम दिवस से आज तक का इतिवृत्त इनमे भरा पडा है।

मैं डायरी पूरे मनोयोग से लिखता हूँ। प्रो जे पी नायक को शिक्षा के क्षेत्र का कौन नही जानता। वे ही शिक्षा आयोग (1964–66) के सदस्य सचिव थे। उनका एक अखिल भारतीय सम्मेलन मे भाषण था। मैं भी उसमे उपस्थित था। वे अपने भाषण मे अनुसधान के स्रोतो का जिक्र कर रहे थे। उसी प्रसग मे उन्होने दक्षिणी भारत के एक महानुभाव का नाम लेकर बताया कि वे नियमित रूप से डायरी लिखते थे। डायरी मे वे छोटी–छोटी बाते भी लिखते। जैसे इतना गेहूँ लाया इतना चावल लाया इतनी दाल लाया। इतनी–इतनी कीमत चुकाई। मडी से घर लाने की मजदूरी के इतने पैसे चुकाये। इनकी सफाई के नौकरानी को इतने पैसे दिये। गेहूँ पिसाई के लिए इतना पैसा चुकाया। ऐसे ही घर मे की गई प्रत्येक खरीद–फरोक्त का वह व्यक्ति विस्तृत विवरण लिखता। प्रो जे पी नायक ने कहा कि स्वतत्रता के पूर्व के भाव–ताव का उस व्यक्ति की डायरियाँ ही भारत सरकार के पास आज मात्र एक मौलिक स्रोत है।

डायरी का इतना महत्व यह मे इसी भाषण से समझा। सरकारी सेवा तक मैं डायरी मे ज्यादातर नौकरी सम्बन्धी बाते लिखता था। बाद मे डायरी मे लिखन की बाते बदल गईं।

शुरूआती दिनो मे मैं घरू खर्च का विस्तृत विवरण लिखता। किसी मित्र से मिलने जाता वह भी लिखता। आगन्तुको के नाम और आने के उद्देश्य लिखता। महत्वपूर्ण घटनाओ को लिखता। कहीं की भी हो। विदेश की हो देश की हो राज्य की हो मेरे नगर की हो पास पडौस की हो घर की हो – मै डायरी मे लिख डालता। पास–पडौस की घटनाओ मे शादी ब्याह जन्म हारी–बीमारी मरण या जो भी कार्यक्रम जिसमे मैं शामिल होता अवश्य लिखता। मेरा सवेरा वायुसेवा देवदर्शन आसन व्यायाम और पूजापाठ से शुरू होता। इस वर्णन से प्रत्येक पृष्ठ को शुरू करता। किसी दिन किसी कारण से इनमे से किसी प्रवृत्ति म चूक हो जाती तो यह भी डायरी मे लिखा जाता। रात्रि–विश्राम के पूर्व

अपनाई जा रही प्रवृत्तियो से प्रत्येक पृष्ठ को समाप्त करता। इन प्रवृत्तियो मे खास कर उस धार्मिक पुस्तक का नाम और अध्यायो की सख्या लिखता जो मै क्रमश पढता जाता। जब एक पुस्तक पूरी हो जाती तो किसी अन्य को शुरू करता। तब उसका नाम और अध्याय लगातार लिखता जाता। अत मे साधना का वर्णन लिखता। इसका कोई नया अनुभव होता तो वह भी लिख डालता। कब–कब क्या इलहाम हुआ यह भी मेरी डायरी के किसी न किसी पृष्ठ पर अवश्य लिखा मिलेगा।

बाद मे एक ऐसा जमाना आया जब मैं पढने लगा। मैंने कम पढाई नहीं की। खूब की। अपने आसन पर बैठता और पढता। सेवा–निवृत्त–जीवन वानप्रस्थी का जीवन होता है। साधु–सन्तो की जीवनियाँ उनके अनुभव उनसे साक्षात्कार उपनिषद् नीति सम्बन्धी पुस्तके और अलग–अलग सतो के द्वारा बतलाई गई साधना की विधियो पर मैंने कई पुस्तके पढ डाली।

में अनुसधान का विद्यार्थी हूँ। पुस्तक का नाम लेखक सस्करण क्रम और प्रकाशन वर्ष लिखता हूँ। फिर पढना शुरू करता हूँ। उसकी कोई लिखने लायक बात लिखने के पहले पृष्ठ सख्या लिखना नहीं भूलता। इसलिए कि कब किस बात को कहाँ लिखनी पड जाये। तब सदर्भ तत्काल उपलब्ध हो जाये।

मै बडे ध्यान से पढता हूँ। ऐसा पढता हूँ कि वापस सुना सकू। पढने के दिनो की डायरियाँ पढी गई पुस्तको के 'गुटके' हैं। कब किस पुस्तक को शुरू की ? पढने मे कितने दिन लगे ? कब पूरी की ? कितने दिन तक नई पुस्तक नही शुरू की ? कब से नई पुस्तक शुरू की ? जब मैं जानना चाहूँ जान सकता हूँ। दूसरा कोई जानना चाह तो वह भी जान सकता है।

पढाई के समय कोई मित्र आ जाता तो उसका स्वागत करता । बाते करता। पूछने पर बताता। उस अध्ययन मे भागीदार बनाने का यत्न करता। घरेलू और सामाजिक दायित्व बराबर निभाता। इनका ब्योरा भी डायरी मे लिखता। जब किसी पृष्ठ पर जगह कम रह जाती तो अति सक्षेप मे लिखता। फिर भी जगह न बचती तो मार्जिन मे बची जगह पर ही लिख डालता। पर सवेरे से रात्रि विश्राम तक का विवरण लिखता।

मेरी पढाई के कारोबार म धीरे–धीरे मदी आने लगी। मदी का कारण कारोबार मे बदलाव था। पढने की बजाय ज्यादा समय लिखने मे लगने लगा। लिखने के काम मे भी मै पीछे नही रहा। 'लेखन का लेखा' मैंने अलग लिखा है। पर डायरी तो जीवन का लेखा है। जो गुजर चुका उसको सुस्पष्ट करती है। जो गुजर रहा है उससे सजग रखती है। जो गुजर सकता है उसकी ओर इगित करती है। इस लिये डायरी लिखना मेरे लिए सार्वकालिक है। लिखने के

दिनो मे मैं डायरी मे लिखने का ब्योरा लिखता। रचना का नाम लिखता। उसकी प्रगति का वर्णन लिखता। प्रकरण का शीर्षक लिखता। वह जितने दिन चलता प्रतिदिन डायरी मे लिखता जाता। जब पूरा हो जाता तो उसको लिखता। प्रत्येक नये प्रकरण का ब्योरा इसी प्रकार लिखता जाता। उसके शोधन–सशोधन का काम करता तो यह पक्ष भी लिखता।

ये सब बाते तब लुप्त हो जाती जब किसी कामकाजी यात्रा पर निकल जाता। उन दिनो यात्रा से सम्बन्धित बाते डायरी म लिखता। टिकिट न किराया दर्जा रवानगी दिनाक और समय गाडी का नाम गन्तव्य का स्थान वहाँ पर पहुँच का दिनाक समय ओर ठहरने का स्थान। वहाँ किये गये कार्य का दैनिक विवरण साथी–सहयोगियो के नाम कुछ नये स्थान देखे गयो तो उनके नाम जब किसी नये व्यक्ति से मुलाकात होती और भविष्य के लिए भी उसकी उपयोगिता आकता तो उसका पद व पता विस्तार के साथ लिखता। यात्रा क प्रारभ के समय लिखी बाते वापसी की यात्रा के अवसर पर भी यथावत लिखता। इस प्रक्रिया को आज तक निभाता चला आ रहा हूँ।

कामकाजी यात्राओ से तीर्थ–यात्राए भिन्न होती है। इन यात्राओ मे दिल–दिमाग बहुत–कुछ हल्का–फुल्का। परन्तु डायरी के पत्ते उन दिनो के पूरे भारी भरकम। तीर्थ–यात्रा टोली मे होती है। कोई जवान कोई बूढा। किसी को क्या पसद किसी को क्या नापसद। किसी की किसी देवता मे आस्था किसी की किसी मे। कोई फरियाद दिल कोई कजूस। किसी को बार–बार भूख लगे किसी को नीद ही न आये। ऐसी टोली मे यात्रा के दिनो को गुजारना बडी टेढी खीर। इससे एक कदम आग। कभी कोइ नाक–भौं सिकोडे कभी कोई अन्यमनस्क और कोई–कोई अपने आपमे ही रमा हुआ। ऐसे हालात मे गुजरते चलो और तीर्थ–यात्रा होती चले। ऐसी बाते भी डायरी का भाग तो बनती ही है। फिर जो स्थान देखे जिन–जिन देवताओ के दशन किय उनका विवरण। पडो के द्वारा यात्रियो से रुपये झटकवाने की अनेक शैलियाँ। उन शैलियो मे भी कोई–कोई तो ऐसी जिसे पूरी लिखे बिना मन को सतोष न हो। इसके अलावा खरीददारी का लेखा–जोखा। ठहरने के स्थान का नाम–पता। इस सब कुछ के अलावा किसी दूसरे स्थान के लिए रवाना होने पर उस दिन की डायरी मे स्टेशन का नाम गाडी का नाम टिकिट न किराया आदि का विवरण लिखना तो एक अनिवार्यता थी ही। एक तीर्थ यात्रा कई दिनो तक चली होगी। कई दिनो तक चलने वाली यात्राए भी मैंने 3–4 ही की होगी। परन्तु ऐसे अवसरो पर मैंने मेरी डायरी के साथ पूरा न्याय किया।

एक–दो मेरे मित्र यात्रा पर जा रहे थे। मुझसे मिलने आये। अमुक–अमुक स्थानो की यात्रा करेगे – यह भी बताया। मैं भी वहाँ गया हुआ था। मैंने उन स्थानो की यात्रा के वर्ष को याद किया। डायरी निकाली। उनको जानकारी दी। क्या करना है क्या नही करना है – यह बताया। लौटकर वे मुझसे मिलने आये। बताया कि अगर आपसे मिलकर नही जाते तो भारत सेवाश्रम सघ की धर्मशालाओ का लाभ नही मिलता। स्वामी प्रणवानदजी ने धर्मप्राण तीर्थ–यात्रियो की महान् सेवा की है। पडो के शोषण से मुक्ति के लिए ये सुरक्षात्मक किले हैं।

कभी ऐसे भी दिन आते जब मैं ससारी जजाल मे खो जाता। कुछ ऐसा व्यस्त हो जाता कि डायरी लिखना भूल जाता। इस भूल को जब मैं शब्दायित करता हूँ तो मुझे शर्म महसूस होती है। पर यह सही है। ऐसा होता है। दो–तीन दिन के अन्तराल के बाद जब डायरी उठाता हूँ तो पिछले पृष्ठ खाली मिलते हैं। ऐसे मे कुछ कागज टटोलता हूँ कुछ याद करता हूँ कुछ पूछताछ करता हूँ और उन पृष्ठो पर जब लिखने लगता हूँ तो लगता है जैसे खानापूर्ति कर रहा हूँ। पर ऐसा भी करता हूँ। मात्र इसलिए कि वे पृष्ठ खाली न रहे वे पृष्ठ मेरे अस्तित्व का बोध कराये।

ऊपर लिखी बातो के अलावा भी मेरी डायरियो मे बहुत कुछ है। क्या–क्या गिनाऊ ! कैसे–कैसे बताऊँ। एक दिन मेरे रिश्तेदार भैया आये। तीन–चार साल पहले की बात होगी। कहने लगे – मेरे बाबा जिस दिन स्वर्गवासी हुए उस दिनाक मे 'कन्फ्यूजन' है। आप डायरी लिखते हैं। बताइये वह दिनाक क्या था ? मैने कहा – मेरी डायरी मे लिखा होना क्या जरूरी है ? उन्होने कहा – उस दिन आप पधारे थे। आपने जरूर लिखा होगा। मैंने उनके द्वारा बताये वर्ष की डायरी निकाली। बताये गय मास के विवरण देखने शुरू किये। निश्चित दिनाक का पता लग गया। मेरी डायरी से उनकी सेवा हो गई। मेरी पत्नी जानती है कि मै डायरी लिखता हूँ। घरेलू पर्व त्योहारो पर गत वर्ष किन–किन को आमन्त्रित किया था। किस–किस को क्या–क्या भेट सम्मान आदि प्रदत्त किये गये थे यह भी मैं लिखता हूँ। वह जब पूछती है तो मैं उनको बता देता हूँ। मेरे वैयक्तिक जीवन के विभिन्न आयामो के लिए मेरी डायरियॉ 'रेडी रेकनर' का काम करती हैं। शर्त यही है कि उस प्रकार का अवसर पहले आ चुका हो या आया तो हो मगर लिखना मैं भूला न होऊ। मेरे पत्र व्यवहार के मामले मे तो मेरी डायरी रवानगी रजिस्टर की सेवा करती है। मेरे यहॉ से गये प्रत्येक पत्र का विवरण उसी दिन मैं डायरी मे निर्विकल्प रूप से लिखता हूँ। और भी बाते हैं। डायरी लिखना मुनाफे का सौदा है। घाटे का हर्गिज नहीं। शर्त एक ही है कि ईमानदारी से भरी जाये।

डायरियाँ शायद सैंकडो वर्षों से लिखी जाती रही हैं। राजदरबार म तो 'दैनिक हकीकत' लिखने को अधिकारी नियुक्त होते थे। देश के महापुरुष समाज सेवक राजनेता वैज्ञानिक और साहित्यकारो की डायरियो ने समाज पर भारी प्रभाव छोडा है। महात्मा गाधी ने तो सत्य के आराधक के लिए डायरी को पहरेदार की उपमा दी है। व्यापारी के लिए 'बही' ऐसी डायरी है जो उसके व्यापार की रीढ है।

पिछले दिनो जैन बन्धुओ की डायरी ने भारतीय राजनीति मे भूकम्प ला दिया। उस भूकम्प की कपन आज भी लक्षित होती रहती है।

आज के करीब 35 वर्ष पहले मैं अपनी जन्मभूमि गया। वहाँ मेरे एक मित्र थे। मास्टर थे। बडे मजेदार आदमी। वे भी डायरी लिखत थे। वे डायरी मे शेरो–शायरी ज्यादा लिखते। एक पृष्ठ पर उन्होने लिखा था –

हाथ खाली हो या भरे राही।

मगर साफ होना जरूरी है।।

मेरे मित्र ने अपनी डायरी मे इस शेर को जब लिखा होगा तब तो शायद उन्होने इसका महत्व न भी जाना हो। पर आज तो इसका महत्व सर्वोपरि कह दिया जाये तो भी अत्युक्ति नहीं होगी।

यह भी डायरी की ही करामात है।

मैत्री – नये नये समीकरण

मेरी नगरी की कई विशेषताए है। इसमे एक शायद सबसे बडी विशेषता – यह 'सस्थाओ' की नगरी के नाम से ख्याति प्राप्त है। यहाँ के इतिहासकारो कलावत्तो शिक्षाविदो प्रशासको समाजसेवको ने राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नाम कमाया। उनम स कई न अपन–अपने प्रयोग के लिए सस्थाए स्थापित की। जो आज उनके नाम से जानी जाती हैं। उनके काम को आगे बढा रही हैं।

मेरे आवास के आसपास भी कई सस्थाए हैं। इनमे कतिपय तो बहुत पुरानी। एक दिन एक महिला–सस्था के सस्थापक मेरे आवास पर पधारे। सस्था–मत्री भी साथ थी। कहने लगे – आप हमारी सस्था से सहयोग कीजिये। हम महिलाओ और बालको की शिक्षा का काम करत हैं। इसकी शुरूआत हमने सन 1937 मे की थी। आप जेसे योग्य और अनुभवी व्यक्ति हमे चाहिए। हमने आपके अमुक–अमुक मित्रो को सदस्य बनाया हे। आपको भी बनना है। इस कथन के पश्चात् हील–हुज्जत की गुजाइश नहीं थी। मैंने स्वीकृति दे दी। किसी सस्था की मेरे अनौपचारिक समूह म यह प्रथम घुसपैठ थी। मे इसकी समितियो की बैठको मे भाग लेने लगा। मेरे अनौपचारिक समूह के तीन–चार मित्र इन बैठको मे अवश्य मिलते। मित्र–मिलन की इससे आशिक पूर्ति होती। अब हम तीन–चार सदस्य इसकी बैठको के दिनो के अलावा के दिनो मे ही पिकनिक मे शामिल हा पाते थ। यह स्थिति मेरी सेवानिवृत्ति को एक वर्ष होते–होते आ गई।

करीब छ माह और गुजरे। एक अन्य सस्था मे मत्री मेरे आवास पर पधारे। उनकी कार्यकारिणी समिति के तीन सदस्य साथ थे। मुझे आजीवन सदस्य बनाना चाहा। कहने लगे – शुल्क आप द न द । हम जेब से देंगे। पर आपको सदस्य बनना पडेगा। अब मैं क्या करता। सदस्य बनना पडा। शुल्क भी देना पडा। यो मैं दो सस्थाओ से जुड गया। अब दो सस्थाओ की बैठको के दिनाको को टालकर ही 'पिकनिक' का आयोजन सभव रह गया। इस सस्था मे हमारे पिकनिक–मित्रो की सख्या काफी ज्यादा थी। यहाँ अधिक मित्रो से मुलाकाते होती। इसी सस्था के एक महत्वपूर्ण सदस्य तीसरी सस्था की कार्यकारिणी मे महत्वपूर्ण पद सभाले हुए थे। उन्होने मेरा उस सस्था मे भी अधिष्ठापन करा दिया। मेरी सेवानिवृत्ति को दो वर्ष पूरे होते–होते मुझे तीन समाजसेवी शैक्षिक सस्थाओ ने अपना सदस्य बना लिया। इसी अन्तराल मे हम

लोगो ने अपना सगठन खडा कर लिया। शिक्षा सेवाओ से निवृत्त अधिकाश अधिकारी इससे जुड गये। इस सगठन के बेनर तले हम लोग पिकनिक करने लगे। ये सहज की बजाय औपचारिक थी। इनका आयोजन अधिकारी परिषद् के क्रिया कलापो का अग था। लोगो को खीच कर इकटठा करना पडता। लेजाना पडता। लोग खिचे हुए नही आते थे।

हमारे अनौपचारिक समूह मे इस प्रकार चार औपचारिक समूहो की घुसपैठ हो गई। अब हमारा प्रत्येक मित्र कई सस्थाओ का सदस्य था।

सस्थाओ के भी अपने–अपने स्वरूप थे। विस्तार मे नही जाना अच्छा है। अति सक्षेप में उनके तीन स्वरूप थे। किसी की आथिक स्थिति पहले कभी अच्छी थी। दूरदर्शिता कम बरती गई या नहीं बरती गई। कार्यकर्ताओ को उदारता स आर्थिक लाभ दिये गये। शायद इस भ्रात धारणा से कि इससे सस्था का रुतबा बढेगा। कालातर मे आय घट गई। अब ये सस्थाए आर्थिक सकट से उत्पीडित थी। कोई पहले आर्थिक सकट झेल चुकी। अब वे सम्पन्न हो गईं। सम्पन्नता शायद दूरदर्शिता खो देती है। आगे क्या होगा इससे वे बेखबर। निरकुशता के साथ खर्चे। अवाछित परिपाटियो का प्रादुर्भाव। ये एकतरह से भावी सकट को आमत्रित कर रही थी। किन्ही सस्थाओ मे खर्चो का नियमन था। वे अधिक व्यवस्थित प्रतीत होती थी। ये सभी समाजसेवी सस्थाए हैं। सस्थापको ने समाज–सेवा के लिए इनका गठन किया था। इनमे सेवाभावी कार्यकर्त्ता थे। तब बहुत कम पारिश्रमिक दिया जाता था। फिर भी वे सतुष्ट थ। बाद मे सरकार से इनको अनुदान दिया जाने लगा। आर्थिक सहायता देने वाला अपनी शर्तों पर सहायता देता है। कार्यकर्ताओ पर क्रमश सरकारी कर्मचारियो के लिए प्रचलित नियम लागू होने लगे। सेवाभावी कार्यकर्ताओ का दृष्टिकोण सरकारी कर्मचारियो का दृष्टिकोण वनने लगा। सेवा की भावना इन सस्थाओ के कार्यकर्ताओ से लुप्त होने लगी। ऐसा नजर आने लगा जैसे 'समाज–सेवा' हमारे समाज मे मात्र एक 'विचार' के रूप मे ही प्रतिष्ठापित रहेगी। इस प्रकार की तीन–चार सस्थाओ का मैं सदस्य था।

इन सस्थाओ को सहयोग देना मेरे लिए नया काम था। सस्था के स्वरूप के अनुसार मेरी शैली विकसित होती गई। मे जिस किसी समिति का सदस्य होता उसकी बैठको मे भाग लेता। कानून–कायदे की राय देता। कानून–कायदे से चलन के दो अतिम छोर थे। कोई इन्हे पूरा निभाती। किसी के मुखिया मानते कि ऐसा ही करने लगे तो सरकारी और निजी सस्थाओ मे अन्तर ही क्या ? इन दो के बीच कई वर्ग। कायदे से चलने वाली सस्था को मेरा सहयोग सहज। अन्य वर्ग की सस्थाओ से मैं किनारा काटता। सस्थाओ से मेरे सहयोग की यही शैली थी। परन्तु इस सहयोग ने हमारे अनौपचारिक समूह का विघटन शुरू कर दिया।

हम लोग अब सस्थाओ की बैठको मे मिलते। जिस सस्था मे हम मे से जितने सदस्य उतनो से ही हमारी मुलाकात होती। कही तीन कही अधिक अधिक से अधिक नो तक भी । इन सस्थाओ के क्रिया–कलाप हमारी मुलाकातो क मुख्य माध्यम थे।

इन बैठको मे परोसी जाने वाली चाय नाश्ते या जलपान का हम लोग आनद लेते। प्रत्येक सस्था मे आमसभा की बैठक होती। यह वर्ष मे एक बार होती। इसमे सत्र भर के कार्यक्रमो का लेखा–जोखा प्रस्तुत किया जाता। चर्चा होती। सस्था की ओर से सहभोज होता। ऐसे सहभोजो मे हमारे अनौपचारिक समूह क सभी सदस्य मिलते। सस्था क कुछ अन्य सदस्य वहाँ होत। कुछ विशेष आमन्त्रित भी उनमे शामिल होते। आम सभाओ के पश्चात् के सहभोजो मे हम पहले वाली पिकनिको का आनद ढूढते। ये भोज सस्था परिसर मे होते। हमारी पिकनिके रमणीक प्राकतिक स्थलो पर होती। इन भोजो मे कई वर्गों का प्रतिनिधित्व होता। पिकनिको मे मान मित्रो का समूह होता। इन भोजो मे मिलने–जुलने की अवधि भोजनावधि तक सीमित थी। पिकनिक तो सारे दिन मजा देती थी। पिकनिक का मजा इन सहभोजो मे कहाँ ? हम वैसे कार्यक्रम के लिए तरसते थे। पर कर नही पाते थे। करते भी कैसे ।

सस्थाओ मे हर तीसरे साल नई कार्यकारिणी का गठन होता। आम सभा के सदस्य इसको चुनते थे। सस्था मे सदस्य सेवा के लिए होते हैं। आपसी राय से रीति–नीति निर्धारित करते हैं। उस अनुसार सस्था चलती है। सदस्यो मे एक जुटता जरूरी है। चुनाव एक–जुटता पर विपरीत प्रभाव डालते है। एक पद के जितने ज्यादा उम्मीदवार एक–जुटता पर उतना ही विपरीत प्रभाव। कार्यकारिणी के सभी पदो पर ऐसा हो तो एक–जुटता मात्र बात करने को बच रहती है। 'मतभेद हो पर मनभेद न हो का सिद्धान्त अच्छा लगता है। परन्तु पालने मे असभव जैसा।

पद के लिए चुनाव लडना। मिया–मिट्ठू बनते घर–घर प्रचार करना। अपनी साख मतो से नपवाना। ऐसी जीत के माध्यम से महत्वपूर्ण बनना। समाज–सेवक कहलवाना। कुछेक की मजबूरी हो सकती है। उनकी जो अपने महत्व से वाकिफ नही। ऐसे कितने से ! वे ऐसे झमेले मे नही पडते जो अपना महत्व जानते हैं। मेरे कई मित्र अध्यक्षीय व्यवस्था के पक्षधर थे। सर्वसम्मत अध्यक्ष तय किया जाये। उसको अपनी कार्यकारिणी बनाने का अधिकार दिया जाये। उसके निर्णय को सर्वसम्मत माना जावे। जिससे एक–जुटता बनी रहे। परन्तु हमारे अपने ही अतरग मित्रो को यह तरीका पसद नही था। वे विरोध करते। परन्तु चुनाव मे सर्वसम्मत अध्यक्ष तय किया जाता। उसको अपनी

कार्यकारिणी घोषित करने का अधिकार दिया जाता। इस प्रकार घोषित कार्यकारिणी आम सभा द्वारा चयनित मानी जाती। ऐसा होता जाता। ऐसा हाने पर अपने ही अतरग मित्रो से क्षमत–क्षमायाचना के सीधे यत्न नही किये जाते। शीत–विरोध बढना स्वाभाविक था। व्यक्ति–व्यक्ति के आपसी सम्बन्ध अतरग नजर आते। परन्तु दोनो विचारो वाले समूहो का मिलन अब बडा मुश्किल। पिकनिक का पुराना रूप अब मात्र स्मृति का अग रहता रहा। नये–नये समीकरणो मे हमारा पुराना औपचारिक समूह काफूर होता गया। इसी समूह का कोई सदस्य अब अपनी ही सस्था की पूर्णकालिक सेवा मे लग गया। किसी ने अपना ही कारोबार बढा लिया।

पुराने मित्रो की मैत्री अब भी कायम है। इतना अवश्य है कि अब मित्र दो–दो तीन–तीन के समूह मे मिलते हैं। शारीरिक शक्ति अब ऋणात्मकता की ओर अग्रसर है। जोश–खरोश घटता जा रहा है। ज्यादा लम्बी यात्रा अब मुफीद नही। फिर भी मैत्री का तत्व मडली के रूप मे प्रस्फुटित हुए बिना नहीं रहता।

मेरी एक और भी मडली है। अनजाने मित्रो की मडली। इसकी पृष्ठभूमि मे स्वास्थ्य और देवदर्शन है। इसीलिए मैं रोजाना सवेरे गुलाबबाग जाता हूँ। वहाँ जाना वर्षों स चल रहा है। तब से जब सेवा स निवृत्त होकर आया था। तब सवेर जल्दी जगता। जल्दी–जल्दी तैयार होता। चल पडता। बगीचे मे प्रवेश करता। बगीचे की सीमा पर एक दीवार बनी है। दीवार के अन्दर की तरफ एक पक्की सडक है। यह सडक मेरे वायुसेवन का मार्ग था। बीच मे एक सघन कुज आता था। उसमे एक बैंच थी। उस पर बैठकर मैं 'नादब्रह्म' की उपासना करता। फिर आगे बढता। धीमा दौडो–तेज चलो के सिद्धान्त का पालन करता। आज भी करता हूँ। पर तब मे और अब मे अन्तर है। तब जल्दी जगकर जाता था। अब देरी से जगकर जाता हूँ। अब वायुसेवन का मार्ग कट–छट गया है। इस मार्ग मे भी कुछ दर्शनीय स्थल हैं। अब इन पर अधिक समय लगने लगा है। पहले वायुसेवन करके सीधा घर आता था। अब गुलाबबाग मे एक पडाव भी लगता है। पडाव स्थल है हनुमानजी का मदिर। यहाँ कई बुजुर्ग और युवक इकटठे होते हैं। सबके आराध्य देव हनुमानजी हैं। इसी विशेषता ने एक अनौपचारिक समूह का गठन कर दिया। मैं भी इसका सदस्य हूँ। मैं हनुमानजी की उपासना करीब 35 मिनिट तक करता हूँ। इतनी अवधि होने से मैंने प्रत्येक को साधना करते देखा है। यह अनुभव भी अनोखा है। इस समूह को मै सतरगी समूह कहता हूँ। हम लोग एक दूसरे का नाम नही जानते। कौन क्या है ? क्या था ? यह भी नही जानते। हम लोग मात्र शक्ल से एक दूसर को जानते ह। उसमे भी पहिनावा मुख्य है। पहचान–पहनावा ही है। कोई नही आया तो पूछते हैं – वे पीली पगडी वाले नहीं आये क्यो ? इन पहचान चित्रो से ही हम लोग एक दूसरे के लिए

पूछ–ताछ करते हैं । जो–जो मिले उनसे मिल कर आनदित होते हैं। अनुभवो का आदान–प्रदान होता है। जीवन जीने का गुर एक दूसरे से जानते हैं। हँसी मजाक करते हैं। ऐसे निस्वार्थ सदस्यो वाला अनौपचारिक समूह आज की दुनिया मे दुर्लभ है। मुझे लगता है इनमे कुछेक निश्चित ही परमहस हैं। मैं इनकी ओर खिंचा हुआ प्रतिदिन गुलाबबाग चला जाता हूँ। जब लौटता हूँ तो ताजगी प्रसन्नता और आनद से भरपूर होता हूँ।

ऐसी मडली चलती है। इसमे योजक तत्व अवस्थित है। अत यह चलेगी। कब तक ? यह नही जानता। इतना जानता हूँ कि किसी न किसी चमत्कारिक शक्ति या व्यक्तित्व से मानव समूह सगठित होता है। सगठित रहता है। परन्तु मानव समूह का प्राकतिक रुझान विघटन की ओर होता है। इस मडली का भी देर–सवेर विघटन होगा। मानव समूह कोई सा भी हो कहीं भी हो उसकी यही नियति है।

मैत्री समूह का विघटन और नये समूह का आविर्भाव तो मात्र उदाहरण हैं। सेवा निवृत्त जीवन की 'नई शुरूआत' से आज तक अनेक समीकरण बने। उनमे कई का रूपान्तरण हुआ। कई विघटित हुए। कई नये–नये रूप मे उभरे। कार्यों के अनेक रूप। परन्तु उनमे भी लगातार परिवर्तन। फिर भले वह लेखन हो भाषण हो स्वाध्याय हो साधना की दिशा हो वायुसेवन की सीमा हो योगासन का अनुपान हो सामाजिक कार्यों मे भागीदारी का स्वरूप हो मौलिक ग्रथ रचना का आयाम हो कुटुम्ब की उपादेयता के लिए करणीय कार्य हो या फिर जैसा कि अभी–अभी कहा गया प्रतिदिन मिलने वाले मित्र ही क्या न हा। सभी दिशाओ मे अनवरत समीकरण।

जिस प्रकार से सेवारत जीवन के पिछले 25–30 वर्ष लगातार फैलाव की कहानी कहते रहे थे वैसे ही सेवानिवृत्त–जीवन के पिछले 20 वर्ष किसी विशेष प्रकार की वापसी की कहानी कहने लगे। पहले हमने बस्त का बोझ बढाया। सूचनाओं को शिक्षा माना। अब हम बोझ घटाने को महत्व देने लगे। कहने लगे– सूचनाओ को हटाओ सिद्धान्तो को स्थान दोगे तो बस्ते का बोझ घटेगा। पहले पढाने को महत्व था। खूब पढाओ। पढाते चले जाओ। वह जरूरी था। ऐसा करके ही अधिकतम' सूचनाओ से भरा पाठ्यक्रम पूरा हो सकता था। मोटी–मोटी पाठ्यपुस्तके पढाई जा सकती थीं। तब विद्यार्थियो के तेतीस प्रतिशत जानने से ही कक्षोन्नति होजाती थी। अब सीखना महत्वपूर्ण बनता जा रहा है। ऐसे सिखाओ कि सीखने वाले का सीखना पारगति पर पहुँचे । इसके लिए अधिकतम का स्थान 'न्यूनतम लेने लगा है। 'न्यूनतम अधिगम स्तर अब शिक्षा मे महत्वपूर्ण है। इसमे पारगति आवश्यक है। स्वतत्रता के पूर्व की शिक्षा म आर्ष

वाक्य था – थोडा पढाओ पर पक्का पढाओ। हम वापस उसी ओर लौट रहे हैं। इस वापसी के लिए नई तैयारियाँ शुरू। इनमे भी शिक्षा के कई आयाम है। यह उदाहरण शिक्षा मे समीकरण का है। राष्ट्रीय स्तर पर भी अनेक आयाम नजर आ रहे है। सबसे बडा तो यही कि आजाद होते ही हमने 'राष्ट्रीयकरण' को राष्ट्रीय विकास की कुजी माना। आज 'उदारीकरण' राष्ट्रीय विकास की कुजी माना जा रहा है। जिसका प्रभाव राष्ट्रीय और राजकीय कार्यप्रणाली पर दृष्टिगत हो रहा है। यह व्यापक समीकरण को इगित करता है।

राष्ट्र की बात हो राज्य की बात हो विभागो की बात हो शिक्षा की बात हो किसी मानव समूह की बात हो सेवारत व्यक्ति की बात हो या सेवानिवृत्त व्यक्ति की कहानी ही क्यो न हो समीकरण नये–नये समीकरण ही गति का जीवन्तता का प्रतीक हैं।

प्रत्येक सेवारत का जीवन अनवरत समीकरणो से गुजरता है। अतिम बिन्दु पर पहुँचता है। जहाँ से उसका सेवानिवृत्त जीवन शुरू होता है। सेवारत जीवन की प्रतिच्छाया के रूप मे ही सेवानिवृत्त जीवन अवतरित होता है। सेवारत जीवन के विशिष्ट घटक सेवानिवृत्त जीवन के घटको के रूप मे अकुरित होते हैं। विकसित होते हैं। फलते–फूलते हैं। उस जीवन की उतनी उससे कम या अधिक परिमाण मे सार्थकता प्रतिपादित करते हैं।

किसी व्यक्ति का सम्पूर्ण सेवारत जीवन उसके वैसे सेवानिवृत्त जीवन की तैयारी है जैसा वह जीना चाहता है।

यही उसका समीकरण है।

यह रचना इसी समीकरण को प्रकाशित करती है।

अब मुझे अधकूप' के मामले मे जोर–जबरदस्ती नही करनी पड रही ।

एक समीकरण बैठ गया है।

11813
10/11/2001